स्व–निर्देशित अध्ययन सामग्री
Self -Instructional Learning Material

मुख्यमंत्री सामुदायिक नेतृत्व क्षमता विकास कार्यक्रम

मॉड्यूल–9
सामुदायिक संगठन एवं गतिशीलता
Community Organization and Moblization

समाजकार्य स्नातक पाठ्यक्रम (द्वितीय वर्ष)
(सामुदायिक नेतृत्व में विशेषज्ञता)

Bachelor of Social Work (Second Year)
(Specialization in Community Leadership)

महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट
जिला-सतना (मध्यप्रदेश) - 485334

मॉड्यूल–9 : सामुदायिक संगठन एवं गतिशीलता

अवधारणा एवं रूपरेखा : **प्रथम संस्करण 2016**

बी.आर. नायडू , आई.ए.एस. प्रमुख सचिव

जे.एन. कंसोटिया, आई.ए.एस. प्रमुख सचिव

अलका उपाध्याय, आई.ए.एस. प्रमुख सचिव

प्रेरणा एवं मार्गदर्शन :

प्रो. नरेश चन्द्र गौतम, कुलपति, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट

परामर्श :

डॉ. टी. करुणाकरन, पूर्व कुलपति

डा. वीणा घाणेकर, वरिष्ठ सलाहकार

जयश्री कियावत, आयुक्त, महिला सशक्तिकरण

श्री उमेश शर्मा, कार्यपालन निदेशक, मध्यप्रदेश जन अभियान परिषद

लेखक मण्डल :

डॉ. सचिन कुमार जैन, विकास संवाद

सौमित्र राय, विकास संवाद

सम्पादक मण्डल :

डॉ. अमरजीत सिंह

डॉ. वीरेन्द्र कुमार व्यास

डॉ. सूर्यप्रकाश शुक्ल

रेखांकन :

कु. प्रतिभा देवी, श्री सोवन बनर्जी

मुद्रक एवं प्रकाशक :

कुलसचिव (ग्रामोदय प्रकाशन की ओर से),

महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट

जिला–सतना (मध्यप्रदेश) – 485334, दूरभाष– 07670–265411

सम्पर्क :

डॉ. अमरजीत सिंह, निदेशक एवं लिंक अधिकारी

महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (मध्यप्रदेश)

ई–मेल– cmcldpcourse@gmail.com, मोबाइल– 9424356841

श्री आर. के. मिश्रा, राज्य सलाहकार (यूनिसेफ) सी.एम.सी.एल.डी.पी.

ई–मेल– rkmishraguna@gmail.com, मोबाइल– 9425171972

कॉपीराइटः © – महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (मध्यप्रदेश)

आभारः– इस पाठ्यक्रम की अध्ययन सामग्री अनेक स्रोतों, व्यक्तियों के अनुभव और संस्थाओं के प्रकाशनों एवं वेब साइट्स पर उपलब्ध सामग्री के सहयोग से तैयार की गई है। सभी के प्रति आभार।

मॉड्यूल–9 : सामुदायिक संगठन एवं गतिशीलता

9.0 विषय प्रवेश **5–11**

9.0.1 प्रस्तावना

9.0.2 सामुदायिक संगठन की पृष्ठभूमि

9.0.3 समुदायिक संगठक के रूप में गांधी जी और उनके सूत्र

9.1 समुदाय और सामुदायिक संगठन **12–34**

9.1.1 मानव समाज का उद्‌भव और समाज की संरचना का बनना

9.1.2 समुदाय की अवधारणा

9.1.3 समुदाय की प्रकृति

9.1.4 समुदाय के प्रकार

9.1.5 समुदाय और राज्य व्यवस्था के बीच सम्बन्ध

9.1.6 मानव समाज – निजी व्यवस्था से राज्य व्यवस्था तक

9.1.7 समुदाय और राज्य व्यवस्था के बीच की डोर – संविधान

9.1.8 सामुदायिक संगठन के मायने

9.1.9 सामुदायिक संगठन का अस्तित्व में आना

9.1.10 सामुदायिक संगठन के रूप

9.1.11 सामुदायिक संगठन का दायरा

9.2 सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया और सिद्धांत **35–51**

9.2.1 सामुदायिक संगठन

9.2.2 सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया

9.2.3 सामुदायिक संगठन के सिद्धांत और मूल्य

9.2.4 समुदाय संगठक – एक व्यक्तित्व को परिभाषित करने की कोशिश

9.2.5 सामुदायिक संगठक के कुछ गुण

9.2.6 सामुदायिक संगठक के कौशल

9.2.7 सामुदायिक संगठक की भूमिकाएं

9.3 समुदाय में सत्ता शक्ति और ताकत **52–65**

9.3.1 समुदाय के ढाँचे में सत्ता शक्ति और ताकत

9.3.2 सत्ता और ताकत की अवधारणा

9.3.3 समुदाय में सत्ता शक्ति के ढांचों के प्रकार

9.3.4 समुदाय में सत्ता और ताकत के ढाँचे को समझने की जरूरत

9.4 सामुदायिक विकास और सहभागिता **66–89**

9.4.1 सामुदायिक विकास – अवधारणा, चरित्र और दायरा

9.4.2 विकास के क्षेत्र या दायरे

9.4.3 सामाजिक कार्य और सामाजिक आंदोलन – समानताएं और अंतर

9.4.4 सामुदायिक सहभागिता – परिभाषा और अर्थ

9.4.5 सामुदायिक सहभागिता और सामाजिक अंकेक्षण

9.4.6 सामाजिक अंकेक्षण का सामाजिक बदलाव में महत्व

9.5 सामुदायिक संगठित पहल **90–112**

9.5.1 सामुदायिक संगठित पहल

9.5.2 समुदाय के संगठित पहल का मतलब

9.5.3 सामुदायिक संगठित पहल – मूल्य और सिद्धांत

9.5.4 सामुदायिक संगठित पहल – एकजुटता का नजरिया

9.5.5 मूल मंतव्य

9.5.6 सामुदायिक संगठित पहल– कुछ तकनीकें

9.5.7 इंटरनेट और सोशल मीडिया का उपयोग

■■■

प्रस्तावना

किसी भी ग्राम अथवा नगर के विकास के लिए सबसे बड़ा संसाधन वहां के लोग हैं। विकास की समस्याओं का हल समाज द्वारा ही संभव हैं। ग्राम अथवा नगर का विकास तब तक संभव नही हो पायेगा जब तक कि उसमें स्थानीय जन भागीदारी सुनिश्चित न हो। स्थानीय स्तर की समस्याओं व उनके समाधान की बेहतर जानकारी उन्हीं के पास है। स्थानीय स्तर पर उपलब्ध सीमित संसाधनों से किस प्रकार अधिकतम लाभ प्राप्त किया जा सकता है, इसका भी आंकलन वहां के लोग ही कर सकते हैं।

प्रत्येक समाज में कुछ ऐसे लोग भी होते हैं जो स्वैच्छिकता के भाव से समाज के विकास एवं उत्थान के लिये कार्यरत होते हैं। यदि ऐसे लोगों को जागरूक, क्षमता सम्पन्न एवं सशक्त कर दिया जाए तो वे अधिक प्रभावी एवं व्यवस्थित तरीके से समाज की सहभागिता से समाज के विकास के लिये कार्य कर सकेंगे। ऐसे ही स्वप्रेरणा से प्रयासरत लोगों को शिक्षित कर सशक्त सामाजिक नेतृत्वकर्ता के रूप में विकसित करने हेतु शासन द्वारा मुख्यमंत्री सामुदायिक नेतृत्व क्षमता विकास पाठ्यक्रम का संचालन किया जा रहा है। इस पाठ्यक्रम के अन्तर्गत एक वर्ष सफलतापूर्वक पूर्ण करने पर समाज कार्य (सामुदायिक नेतृत्व में विशेषज्ञता) में सर्टिफिकेट, दो वर्ष सफलतापूर्वक पूर्ण करने पर समाज कार्य (सामुदायिक नेतृत्व में विशेषज्ञता) में डिप्लोमा तथा तीन साल सफलतापूर्वक पूर्ण करने पर समाज कार्य (सामुदायिक नेतृत्व में विशेषज्ञता) में डिग्री दी जायेगी। इस पाठ्यक्रम का उद्देश्य प्रदेश के ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में ऐसे क्षमतावान युवक एवं युवतियों को तैयार करना है, जिन्हें क्षेत्र के विकास की अच्छी समझ हो और जो क्षेत्र की समस्याओं की पहचान भी कर सकें। समस्याओं के निदान के लिए निर्णायक पहल कर सकें। आत्मविश्वास और ऊर्जा से ओत–प्रोत नौजवानों की ऐसी पीढ़ी तैयार हो जो समाज की समस्याओं के समाधान के लिए केवल सरकारी प्रयासों पर निर्भर न हों, बल्कि समुदाय के परिश्रम और पुरुषार्थ से ग्राम की या अपने आस–पास की परिस्थितियों को बदलने के लिए सकारात्मक पहल कर सकें।

यथार्थ में अपने क्षेत्र के विकास में आपके योगदान से ही स्वर्णिम मध्यप्रदेश का स्वप्न साकार हो सकेगा। इसी की पहली कड़ी के रूप में यह पाठ्यक्रम आपके सम्मुख प्रस्तुत है, जिसमें परिवर्तन और विकास के दूत बनाने के लिए आपको सैद्धान्तिक और व्यावहारिक मार्गदर्शन प्रदान किया जा रहा है। इस पाठ्यक्रम के माध्यम से प्रयास किया गया है कि आप ग्राम के विकास के प्रयासों को वैज्ञानिक स्वरूप दे सकें। आप जो भी सामुदायिक कार्य करें वह स्थायी हो, सबके सहयोग से हो और सबके विकास में सहयोगी हो। इस दृष्टि से समुदाय विकास के कुछ महत्वपूर्ण आयामों को इस पाठ्यक्रम के प्रथम वर्ष में आपके ज्ञानवर्धन एवं प्रशिक्षण हेतु समायोजित किया गया था।

पाठ्यक्रम के प्रथम वर्ष की गतिविधियों को सफलतापूर्वक पूर्ण कर आपने अपने परिश्रम और पुरुषार्थ से एक पड़ाव पार कर लिया है। इसी दिशा में सतत् प्रयत्नशील रहकर आपको लोगों की सहभागिता से अपने गाँव/क्षेत्र की तस्वीर और तकदीर बदलना है। सैद्धांतिक विषयों की कड़ी में यह द्वितीय वर्ष के पाठ्यक्रम का द्वितीय प्रश्नपत्र (मॉड्यूल–9) है। शीर्षक है– **सामुदायिक संगठन एवं गतिशीलता।** पहले वर्ष के नेतृत्व विकास मॉड्यूल में आपने सामुदायिक नेतृत्व के जरिये परिस्थितियों के परिवर्तन की अनेक सफल गाथाएँ पढ़ी थी। इस मॉड्यूल में हम आपको गहराई से जनसहभागिता हासिल करने की व्यवहारिक और सैद्धान्तिक विधियों का परिचय देंगे। हम आपको सामुदायिक संगठन के महत्व और प्रभाव की विस्तृत जानकारी भी प्रदान करेंगे। इस मॉड्यूल में समुदाय में सत्ता, शक्ति और ताकत, सामुदायिक विकास और सहभागिता तथा सामुदायिक संगठित पहल जैसे विषय विश्लेषित कर प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

विश्वास है कि यह जानकारी और प्रशिक्षण आपके लिए उपयोगी और प्रभावी सिद्ध होगा। चलिए! शुभकामनाओं के साथ पठन–पाठन की इस रचनात्मक प्रक्रिया के साझीदार बनते हैं।

■■■

इकाई 9.0 : विषय प्रवेश

सामुदायिक नेतृत्व का सबसे महत्वपूर्ण अस्त्र सामुदायिक संगठन के द्वारा समुदाय की सहभागिता प्राप्त कर सकारात्मक दिशा में परिवर्तन के माध्यम से विकास करना है। इस पुस्तक की विषयवस्तु समुदाय और सामुदायिक संगठन पर केंद्रित है। इसमें मुख्यतः हमने कोशिश की है कि समाज को समझते हुए समुदाय की अवधारणा की तरफ बढ़ा जाए। यहां पुस्तक के उपयोग से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान की जा रही है।

9.0.1 : इस पुस्तक के उपयोग की तकनीकें

1. इसकी सामग्री से आपको समुदाय के बारे में विभिन्न पहलुओं से जानकारी मिल पाएगी। समुदाय के भीतर भी सत्ता या कहें कि ताकत का एक ताना–बाना होता है, जो सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया में सबसे बड़ी चुनौती बन जाता है। इसमें लैंगिक, सामाजिक और आर्थिक असमानता कई चुनौतियां पैदा करती है। हमने समाज की इसी वास्तविकता को आधार बना कर समुदाय और सामुदायिक संगठित पहल को समझने की कोशिश की है।

2. हम यह जानते हैं कि इस पाठ्यक्रम का मकसद यह नहीं है कि हम किसी और के लिए कोई पहल करने वाले हैं। चूंकि इसका मकसद यह है कि हम खुद अपने समुदाय और समाज में बदलाव की प्रक्रिया में एक रचनात्मक भूमिका निभा सकें, इसके लिए समझ में विस्तार करना भर है। अतः यह जरूरी है कि हर विषय और किताब की हर इकाई को पढते समय हम अपने आप को केंद्र में रखें, अपने समाज और समुदाय पर नज़र डालते हुए, जानकारी इकठ्ठा करें और समझ बनायें।

3. समुदाय, एक समूह जिसमें हम रहते हैं, के बारे में क्या किसी किताब से सही–सही विचार–सोच मिल सकती है? शायद हाँ और शायद नहीं भी! इस विषय को जानने या इस पर एक समझ बनाने के लिए जरूरी हैं कि हम खुद अपने आस पास नज़र डालें और समुदाय शब्द के अर्थ के बारे में सोचें। जैसे आखिर इसका मतलब क्या है? कई बार हम कहते हैं समुदाय और कई बार समाज! आखिर समुदाय को समाज के बीच क्या अंतर है? समुदाय समाज का हिस्सा है या समाज समुदाय का हिस्सा है? जब आप यह किताब पढ़ रहे हैं, इसलिए कुछ शर्तों को जान लेना जरूरी है।

4. जिन शब्दों का हम उपयोग करते हैं, उनका मतलब जरूर निकालें। यदि किसी वाक्य या अनुच्छेद (पैराग्राफ) को पढ़ा, पर उसके किसी या किन्ही शब्दों का मतलब पकड़ में नहीं आया, तो उस वाक्य और अनुच्छेद का अर्थ या तो अधूरा निकलेगा या शायद पूरी तरह से गलत भी हो सकता है। जब एक वाक्य या अनुच्छेद अधूरा रह गया, तो पूरी इकाई अधूरी रह जायेगी। एक इकाई अधूरी रह गयी, तो किताब का मतलब कैसे निकलेगा? हर शब्द पर नज़र रखियेगा और अर्थ जरूर पकड़ियेगा।

5. इस किताब में शामिल हर हिस्से, हर इकाई में लिखी गयी बात का सीधा जोड़ हमारे परिवार, हमारे मोहल्ले, बस्ती, राज्य और देश की वास्तविक स्वरुप से है। इसमें कोई विचार या बात बाहर से नहीं डाली जा सकती

है। इसके लिए जरूरी है कि हम इसमें लिखी–इसमें से पढ़ी गयी बातों को अपने आस–पास के माहौल से जोड़ कर देखें कि हमारे यहाँ संगठन का मतलब क्या है? कौन ऐसा व्यक्ति है जो समुदाय को एकजुट करता है और जिसकी बात को महत्व दिया जाया है और क्यों?

6. इस पूरे अध्ययन का मकसद है कि समुदाय और समाज में बदलाव के लिए हम खुद भी एक भूमिका लें। इसके लिए जरूरी है कि इस किताब या पाठ्यक्रम की बातों को पढ़ें और उससे आगे की बात खोजने की पहल करें।

7. इस पुस्तक की हर इकाई की शुरुआत कुछ सवालों से होती है और अंत भी। इसका मतलब यह है कि किताब में उत्तर नहीं, बल्कि उत्तर खोजने के लिए कई सूत्र दिए गए हैं। इनका उपयोग करके हम ज्यादा सही अर्थ खोज पायेंगे।

8. इस पुस्तक की इकाईयों में गतिविधियों का उल्लेख है। हमें उनका उपयोग प्रयोग के तौर पर करना है। इसके साथ ही इस पुस्तक के अंत में कुछ प्रायोगिक गतिविधियां लिखी हुई हैं। यह ध्यान रखना है कि हर गतिविधि को करने से पहले उसे अच्छे से पढ़ा और समझा जाए। इसके बाद ही उसकी रूपरेखा बनायी जाए। हर गतिविधि का जुडाव इस किताब की इकाईयों से है।

9.0.2 : सामुदायिक संगठन की पृष्ठभूमि

वास्तव में सामुदायिक संगठन और जनहित के किसी लक्ष्य को हासिल करने के लिए संगठित पहल को किताब से समझ पाना सचमुच लगभग असंभव काम है। हम सबसे पहले संगठन और साझा पहलों के मैदानी अनुभवों से समझने की कोशिश करते हैं कि आखिर यह विषय है क्या?

चिपको आंदोलन

भारत में लोगों और समाज का जीवन पर्यावरण और कुदरत की व्यवस्था से सीधे सम्बन्ध रखता है। उत्तर प्रदेश {अब वह हिस्सा उत्तराखंड राज्य कहलाता है} के हिमालय के पर्वतीय इलाके में रहने वाले लोगों के लिए जंगल और पेड़ों का बहुत महत्व रहा है। 1970 के दशक में सरकार ने अलकनंदा पर्वत के क्षेत्र के जंगल के हिस्से पर खेल का सामान बनाने वाली एक कंपनी को पेड़ काटने का अधिकार दे दिया। यह बात स्थानीय समाज को बहुत प्रभावित कर गयी, क्योंकि इसके पहले सरकार ने स्थानीय लोगों को जलावन और अपने खेती के लिए कुछ सामान बनाने के लिए इन्ही जंगलों से लकड़ी लाने का अधिकार देने से मना कर दिया था। जबकि यह उनके लिए आजीविका का महत्वपूर्ण स्रोत था।

चित्र :9.0.1 सुंदरलाल बहुगुणा

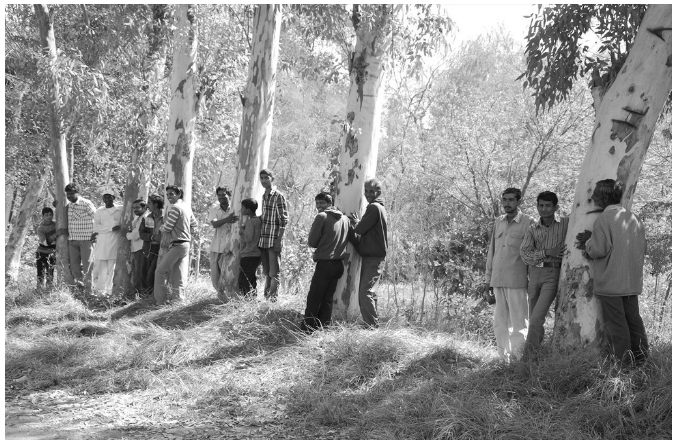

चित्र :9.0.2 चिपको आन्दोलन

लोगों ने आपस में इन दोहरी नीतियों पर चर्चा करना शुरू कर दिया था। जिस कंपनी को पेड़ काटने की अनुमति दी गयी थी, वह जंगल में यह काम करने जाने लगी. ऐसे में मार्च 1974 में अलकनंदा के पहाड़ी इलाके के जंगल में स्थानीय महिलायें इकठ्ठा हुईं और पेड़ों के आसपास श्रृंखला बना कर उन्हें चारों तरफ से घेर लिया। वे सब पेड़ काटने वालों को संकेत दे रहे थे कि यदि पेड़ों को काटने से पहले उन्हें स्थानीय निवासियों को काटना होगा। उन्होंने बताया कि पेड़ों का उनके जीवन में उनकी अपनी जान से ज्यादा महत्व और सम्मान है।

यह सोच किसी एक व्यक्ति में नहीं थी, स्थानीय समुदाय का हर व्यक्ति, महिला और बच्चे यही मानते थे। यही कारण रहा कि अगले पांच सालों में एक छोटे से क्षेत्र से शुरू हुआ पेड़ों से लिपटकर उनकी रक्षा करने वाला यह जन आंदोलन बहुत तेजी से फैला।

इस काम में स्थानीय समूह दसोली ग्राम स्वराज संघ की मदद से महिलाओं ने अपने संगठन बनाए और उन्हें पर्यावरण कार्यकर्ता चंडी प्रसाद भट्ट ने मार्गदर्शन दिया। महिलाओं का यह संगठन जंगल के भीतर जाने लगा और पेड़ों के आसपास मानव श्रृंखला बना कर उन लोगों को रोकने लगा, जो पेड़ काटने आते थे।

जब इस क्षेत्र के गांव के लोग पेड़ बचाने के लिए चिपको आंदोलन के लिए तैयार हो रहे थे, तब उनके बीच यह बात स्पष्ट थी कि उनका संघर्ष किसी एक व्यक्ति, एक समूह या एक समुदाय के फायदे या हितों के लिए प्रतिबद्ध नहीं है। उनके संघर्ष से पहाड़ी जनजीवन और पर्यावरण की सुरक्षा तो जुड़ी ही हुई हैय साथ ही उन्होंने यह भी बताया कि ऐसा विकास उचित नहीं है, जो हमारे जंगलों को नष्ट करके भविष्य के लिए नयी चुनौतियां खड़ी करता है।

रैणी गांव में चिपको आंदोलन

वास्तव में चमोली जिले के रैणी गांव में एक दिन पुरुष गांव से बाहर थे और तभी पेड़ों को काटने का काम होने लगा। तब पुरुषों की अनुपस्थिति में सुश्री गौरा देवी के नेतृत्व में महिलाओं ने पेड़ों से चिपक कर जंगल के विनाश को रोका।

वन संरक्षकों की सबसे बड़ी ताकत थी कि वे एक लक्ष्य के प्रति एकजुट थे. वे वनों का विनाश बचाना चाहते थे। उनका मकसद निजी या सीमित दायरे का न होकर, बहुत व्यापक था।

वास्तव में हुआ यह था कि 1962 में जब भारत का चीन से युद्ध हुआ था, तब रैणी गांव की जमीन को सैनिक उद्देश्यों के लिए अधिग्रहीत किया गया था, परन्तु उसका मुआवजा लोगों को नहीं मिला था। वर्ष 1974 में बहुत दबाव बनने पर सरकार ने कहा कि अब लोगों को मुआवजा दिया जाएगा, इसके लिए ही गांव के पुरुष चमौली गए थे। महिलाओं को लग रहा था कि उस मौके का फायदा उठाकर भारी मात्रा में पेड़ों की कटाई की जायेगी, इसलिए वे संभावित कार्यवाही के लिए तैयार भी थे। इसका मतलब है कि लोग जिस मकसद के लिए संगठित हो रहे थे, उसके प्रति चौकन्ने और सजग भी थे।

महिलाओं ने उस एक दिन में 2500 पेड़ों को काटने से बचाया। उन्हें जान से मारने की धमकी भी दी गयी, पर महिलायें पेड़ों से दूर नहीं हुईं यानी साहस भी पूरा था।

संतोष कुमार सिंह ने अपने आलेख में लिखा है कि सामाजिक आंदोलन की अवधारणा सामाजिक विकास और प्रगति की अवधारणा से भिन्न है। सामाजिक आंदोलन सामूहिक व्यवहार का स्वरूप है। इसका संचालन समाज एवं संस्कृति में नवीन परिवर्तन लाने के लिए होता है। सामाजिक आंदोलनों का उद्देश्य सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक व राजनीतिक क्षेत्रों में आंशिक या अमूल–चूल परिवर्तन लाना हो सकता है। स्वतंत्रता से पहले और पश्चात् अनेक सामाजिक आंदोलनों का जन्म हुआ जिनमें चिपको आंदोलन को भी विशेष स्थान प्राप्त है। इसके पीछे मूल कारण यह है कि इस आंदोलन ने सामाजिक जनचेतना जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है।

चिपको आंदोलन की मान्यता है कि वनों का संरक्षण और संवर्धन केवल कानून बनाकर या प्रतिबंधात्मक आदेशों के द्वारा नहीं किया जा सकता है। वनों के पतन के लिए वन प्रबंधन संबंधी नीतियां ही दोषपूर्ण हैं। गांव की जनता की आवश्यकताओं की ओर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया। एक ओर सरकारी संरक्षण में वन पदार्थों को ऊंची कीमत पर बेचा जाता रहा है तो दूसरी तरफ वनों के बीच में रहने वाले लोगों की जलाऊ लकड़ी, इमारती लकड़ी, चारा पत्ती जैसी आवश्यकताएं जो कानून से प्राप्त है, आज की सरकारी नीतियों द्वारा छीन ली गई हैं।

9.0.3 समुदायिक संगठक के रूप में गांधी जी और उनके सूत्र

हम सब ने गांधी जी के बारे में पढ़ा, जाना और थोड़ा बहुत समझा भी है। महात्मा गांधी ने ब्रिटिश सरकार के सामने "स्वराज" की 11 सूत्रीय मांगे रखीं। जिन्हें अंग्रेजी सरकार ने मानने से इनकार कर दिया। तब गांधी जी ने जन आंदोलन की रूपरेखा तैयार की।

आपको पता होगा कि अंग्रेजी सरकार ने "नमक" कानून बनाया था। जिसके मुताबिक नमक पर कर लगाया गया। यह कर गरीब और अमीर व्यक्ति पर एक समान लागू होता था। इसके साथ ही नमक बनाना और कर के बिना घरेलू नमक की खरीदी भी गैर कानूनी थी। गांधी जी ने अपने आंदोलन के लिए उस नमक कानून को तोड़ने का आन्दोलन चलाने

का निर्णय लिया क्योंकि नमक समाज के हर व्यक्ति की बुनियादी और दैनिक जरूरत है और इस पर कर लगाने के लिए बनाया गया कानून जनविरोधी था। उन्होंने माना कि इस विषय से देश का हर व्यक्ति, हर तबका जुड़ेगा, इसलिए संगठित पहल के लिए यह एक उचित विषय भी है।

गांधी जी ने नमक कानून तोड़ने के लिए दांडी यात्रा की। यह यात्रा अहमदाबाद से 12 मार्च 1930 को शुरू हुई। 240 मील का सफर तय करके यात्रा 6 अप्रैल 1930 को दांडी स्थित समुद्र किनारे पंहुची जहाँ यात्रा में शामिल आंदोलनकारियों ने संयुक्त रूप से नमक बनाकर कानून तोडा। दांडी में नमक बंटे ही, पूरे देश में नमक बना कर कानून तोडा जाने लगा। इस पूरी यात्रा और आंदोलन के मकसद को लाखों लोगों ने समर्थन दिया। इस यात्रा में कहीं कोई तख्ती या झंडा भी नहीं था। इसकी जरूरत ही नहीं पड़ी क्योंकि तमाम तरीकों से पूरे देश और दुनिया को सन्देश बहुत स्पष्ट रूप से दिया जा चुका था।

इस आंदोलन के दौरान तत्कालीन सरकार ने आंदोलनकारियों पर लाठियां बरसायीं। पुलिस ने आंदोलनकारियों से तितर बितर होने के कहा, पर लोग जुटे रहे और भागे नही। देश भर में हुए हिंसक दमन पर उन्होंने कहा कि यदि अहिंसक आत्मा मजबूत हुई तो हिंसक ताकतें कमजोर हो जायेंगी।

दांडी यात्रा वास्तव में सांगठनिक पहल का एक अनूठा उदाहरण है। इस यात्रा के मार्ग की तैयारी की जिम्मेदारी गांधी जी ने सरदार वल्लभ भाई पटेल को दी थी। जानते हैं सरदार पटेल ही भारत के सबसे बड़े नमक निर्माता भी थे। सरदार पटेल ने इस यात्रा का नेतृत्व का त्याग भी किया। किसी भी सांगठनिक पहल में यह जरूरी है कि महत्वपूर्ण नेता या व्यक्ति नेतृत्व की लालसा न रखें।

यह भी आशंका थी कि गांधी जी को इस आंदोलन के लिए गिरफ्तार कर लिया जाएगा, इसीलिए यह पहले से ही तय था कि उनकी गिरफ्तारी के बाद आंदोलन का नेतृत्व कौन करेगा?

हमें यह जानना चाहिए कि जन आंदोलन में रणनीति और रणनीति के मुताबिक तैयारी होना बहुत जरूरी होता है। गांधी जी ने सबसे पहले समाज को सन्देश दिया और इंतजार किया कि कब लोग आंदोलन के लिए पूरी तरह से तैयार होंगे! इस पहल के बाद ब्रिटिश वायसराय लार्ड इरविन ने कहा कि मैं गांधी जी की अद्‌भुत पवित्रता से प्रभावित हूँ. दूसरी बार मिलने पर मैं उनकी कानूनी समझ से प्रभावित हुआ और जाना कि उन पर विश्वास करना ही होगा.

गांधी जी को यह पहचान थी कि आंदोलन की रणनीतिक तैयारी की जिम्मेदारी कौन निभा सकता है, इसलिए उन्होंने सरदार पटेल को चुना और उनके काम में पूरी तरह से विश्वास बनाए रखा।

सबसे महत्वपूर्ण बातें थीं – हर धर्म, हर समुदाय और वर्ग के व्यक्तियों को आंदोलन से जोड़ना। उन्होंने महिला नेतृत्व को हमेशा महत्वपूर्ण माना। इसके साथ सबसे बड़ा सूत्र था अहिंसा।

चित्र : 9.0.3 गाँधी जी एक सामुदायिक संगठक के रूप में

महात्मा गांधी के जन आन्दोलनों के अनुभव से कुछ सूत्र सामने आते हैं –

1. **सत्याग्रह** – जो सही है, उसके साथ खड़े होना। इसमें बहुत चुनौतियां है। संघर्ष लंबा होता है, किन्तु इसमें अपराध बोध कभी नहीं होता, कभी पछताना नहीं पड़ता।

2. **सच्चाई और ईमानदारी** – सच्चाई को पहचानना पड़ता है और हमारे जीवन की साधना का मकसद भी सच की खोज करना और उस पर अमल करना होना चाहिए।

3. **अहिंसा** – दुनिया भर में सत्ता और ताकत के लिए संघर्ष है। हिंसा तब ही होती है, जब हम किसी और को अपना गुलाम बनाना चाहते हैं या किसी का शोषण करना चाहते हैं। यदि हम एक बेहतर दुनिया बनाना चाहते हैं, तो इस तरह की सोच के मुक्त होना होगा। अहिंसा का मतलब है किसी को पीड़ा न पंहुचाना और सबका सम्मान करना।

4. **सहयोग** – हर कार्य का संचालन कर व्यक्ति नहीं कर सकता है। जबकि लक्ष्य को हासिल करने के लिए कई तरह की क्षमताओं, कौशल और भूमिकाओं के निर्वहन की जरूरत पड़ती है। जन आंदोलन में एक समूह सक्रीय होता है और वह सफल तभी होता है, जब सभी एक दूसरे की भूमिकाओं के पहचानते हैं और परस्पर सहयोग की भावना रखते हैं।

5. **शान्ति और प्रेम** – एक दूसरे को स्वीकार करना और अपनाना। केवल इंसानों से प्रेम नहीं बल्कि जीव–जंतुओं और प्रकृति से प्रेम भी बेहद जरूरी है।

■■■

विगत वर्ष के मॉड्यूल विकास की समस्याएं और मुद्दे, नेतृत्व विकास और संचार और विकास के लिए जीवन कौशन शिक्षा में आपने इस रेखाचित्र को देखा होगा। सभी मॉड्यूल्स में संदर्भों के अनुरूप इसकी व्याख्या की गई थी। सार संक्षेप में कहें तो स्पष्ट किया गया था कि एक सामुदायिक नेतृत्वकर्ता अपने समुदाय को वर्तमान स्थिति का वास्तविक परिचय कराता है। समस्याओं को चिन्हित करता है। उनके समाधान तक पहुँचने वाले रास्तों को चिन्हित करता है। रास्ते वैकल्पिक हों तो उनमें से परिस्थिति के मुताबिक सर्वश्रेष्ठ विकल्प का चयन करता है और जन सहभागिता से अपने लक्ष्य की प्राप्ति ही नहीं करता समुदाय के प्रत्येक सदस्य में लक्ष्य प्राप्ति के लिए ऊर्जा और उत्साह का संचार करता है।

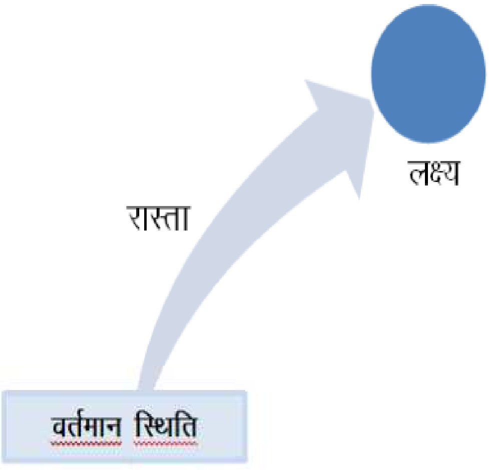

यहाँ हम पुनः आपको इस रेखाचित्र का स्मरण करा रहे हैं। अण्णा हजारे जी हों या राजेन्द्र सिंह जी सभी ने समस्या के स्थायी समाधान के लिए जन समुदाय को संगठित किया है। जन समुदाय को संगठित करना एक महत्वपूर्ण किन्तु कठिन कार्य है। सतत प्रयासों से ही इस लक्ष्य की पूर्ति संभव हो पाती है। इस मॉड्यूल में हम आपको सामुदायिक संगठन खड़ा करने उसमें लोगों को जोड़ने और उसकी सहायता से समस्याओं के हल करने की दिशा में पहल और पुरुषार्थ करने के लिए न सिर्फ प्रेरित कर रहे हैं बल्कि इसकी तकनीकी बारीकियों और सिद्धांतों को भी स्पष्ट करने का प्रयास कर रहे हैं।

इकाई 9.1 : समुदाय और सामुदायिक संगठन

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप जान सकेंगे कि–

- मानव का उद्भव और विकास कैसे हुआ?
- मानव के विकास की प्रक्रिया में मानव समुदाय के रूप में कैसे आया?
- समुदाय की परिभाषा, स्वरुप और प्रकार क्या हैं?
- सामुदायिक संगठन का अर्थ क्या हैं?
- इनका निर्माण किन–किन मकसदों से होता है?
- सामुदायिक संगठन का चरित्र और दायरा क्या होता है?

जब हम समुदाय के बारे में बात करते हैं, तब हमें यह समझना होगा कि समुदाय हमारे अपने विकास यानी मानव विकास की एक लंबी प्रक्रिया के बाद बन कर उभरी हुई व्यवस्था है। वैज्ञानिक अध्ययन बताते हैं कि जीवन की शुरुआत में मानव किसी सामाजिक व्यवस्था में नहीं रहा। वह छोटे–छोटे समूहों में रहा। उन समूहों में श्रम, लिंग आधारित व्यवस्थाएं, राज्य या सरकार और संपत्ति इकठ्ठा करके रखने जैसी व्यवस्थाएं नहीं थीं। लम्बे समय में जीवन में आये बदलावों से जो ढाँचे और ताने–बाने बने, उनमें से एक है – समुदाय।

9.1.1 मानव समाज का उद्भव और समाज की संरचना का बनना

आदिम मानव समाज

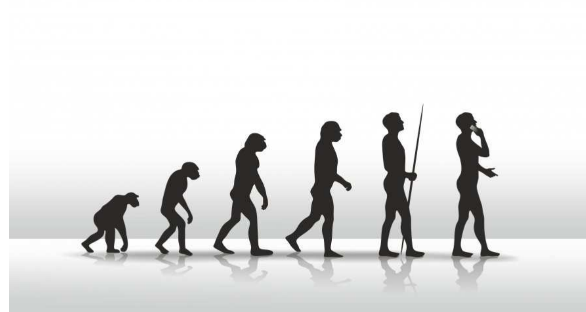

चित्र 9.1.0 : आदि मानव

क्या हमें अपनी जड़ें पता हैं? आदिम मानव वास्तव में किसी सामाजिक व्यवस्था में नहीं था। वह छोटे–छोटे समूहों में रह कर शिकार करता, फल–फूल इकठ्ठा करके जीवन जीता था। तब सामजिक संरचना क्या थी इसके बारे में ज्यादातर अनुमान आज के आदिवासी समुदाय के जीवन से ही लगाए जा सकते हैं। जिन समूहों में आदिम मानव रहता था, उसमें कोई विभाजन या बंटवारा नहीं था। सभी मिलकर काम करते थे। उनमें न तो स्त्री और पुरुष का भेद था, न ही यह कोई निर्धारण था कि किसी व्यक्ति को कोई तयशुदा काम ही करना होगा। एक तरह से हम कह सकते हैं कि श्रम का कोई विभाजन

नहीं था। वे जंगल, नदी और पहाड़ों से जो भी इकठ्ठा करते थे, उसे जमा ¼संग्रहीत) करके नहीं रखते थे। ज्यादा से ज्यादा बचा हुआ शिकार, फल को अगले दो–चार दिनों के लिए रखा रहने देते थे। इसमें भी कोई बंटवारा या विभाजन नहीं था कि किसी को ज्यादा मिलेगा और किसी को कम मिलेगा। न ही यह व्यवस्था थी कि किसी एक व्यक्ति को बचा हुआ खाना रखने की जिम्मेदारी दे दी जायेगी। यानी संपत्ति का विभाजन या उस पर नियंत्रण की व्यवस्था भी नहीं थी।

विकास का पहला चरण – औजारों का बनना, श्रम का विभाजन और स्त्री–पुरुष सम्बन्ध

चित्रः 9.1.1 आदिम मानव

इसके बाद आदिम मानव शिकार के लिए बेहतर औजारों का निर्माण करने लगे। वे काम को सहजता, सफलता और आसानी से करने के रास्ते खोज रहे थे। तब उन्हें यह भी समझ में आने लगा था कि जब उनके शारीरिक रिश्ते बनते हैं, तो बच्चे पैदा होते हैं। ये रिश्ते जिनके बीच बनते हैं, वे एक समान लिंग के न होकर विपरीत लिंग के होते हैं और लिंगों के इस अंतर को स्त्री और पुरुष माना जाने लगा। वे इसे कोई ईश्वरीय घटना नहीं मानते थे। उन्हें समझ में आ गया कि यौन संबंधों से ही बच्चे पैदा होते हैं।

आदिम व्यवस्था में कोई पारिवारिक या एकल सामाजिक व्यवस्था तो थी नहीं, तो ऐसा नहीं था कि किसी खास पुरुष के साथ किसी खास स्त्री के ही सम्बन्ध होंगे। ऐसे में जब बच्चे पैदा होते थे, तो उनका पालन–पोषण पूरा समूह मिलकर करता था।

आदिम मानवों के समूहों को समझ में आया कि जब महिला गर्भवती होती है, तब उसकी स्थिति ऐसी नहीं होती है कि वह शिकार के काम में पूरी तरह से शामिल हो सके। यहाँ तक कि छोटे बच्चों वाली महिलायें भी शिकार में शामिल नहीं रह सकती हैं। ऊपर से बच्चों की देखरेख के कुछ काम केवल महिलायें ही कर सकती हैं। वे काम पुरुष नहीं कर सकते हैं। शिकार के काम, स्त्री–पुरुष के संबंधों, प्रजनन और बच्चों के देखभाल के अनुभवों के आधार पर श्रम के बंटवारे की शुरुआत हुई। इसका मतलब यह हुआ कि पुरुषों की ज्यादा भूमिका जंगल–नदी जाकर शिकार करने और फलों को इकठ्ठा करने में देखी जाने लगी और महिलायें बच्चों की देखभाल के काम से जुड़ने लगीं। शुरुआती श्रम विभाजन व्यवस्था के हिसाब से जरूरतों को पूरा करने के लिए किया गया। जो बाद की सामाजिक व्यवस्था में श्रम बंटवारे से भेदभाव की तरफ तेज गति से बढ़ता चला गया।

आदिम मानव समुदायों में स्त्री की भूमिका और महत्व को स्पष्ट करने के लिए गहराई से किये गये विश्लेषण को हम इस वर्ष के मॉड्यूल–11 महिला सशक्तिकरण में विस्तार से पढ़ेगे।

माना जाता है कि पांच लाख से ज्यादा सालों तक इंसान शिकार, फल, फूल और वनस्पतियों को इकठ्ठा कर जीवन–यापन करता रहा। उसकी जिंदगी स्थिर नहीं थी। वह घूमता रहता था। वह वास्तव में घुमंतू समाज था। वह केवल अपनी जरूरतें पूरी करता और जिंदगी बिताता था। इन सालों में उसने संपत्ति इकठ्ठा करने के बारे में कोई जतन नहीं किये।

विकास का दूसरा चरण – खेती और पशुपालन

इसके बाद यानी अबसे लगभग 10 हज़ार साल पहले मानव ने खेती और पशुपालन के बारे में कुछ अनुभव हासिल किये। उसे समझ आया कि सब कुछ अपने आप पैदा नहीं होता है। वह भी कुछ उत्पादन कर सकता है। उसने यह देखा कि बीजों से पौधे निकलते हैं। वह इनका इस्तेमाल करके अपनी जरूरतों को आसानी से पूरी कर सकता है। इसी तरह पशुओं को पाला भी जा सकता है, ताकि जरूरत के मुताबिक उनका उपयोग किया जा सके। वास्तव में खेती से अनाज को बचा कर रखने और पशुपालन से पशुओं को इकठ्ठा करके रखने की प्रवृत्ति की शुरुआत हुई। अब उसे हर बार अपनी जरूरत को पूरा करने के लिए वक्त–बेवक्त भागने की जरूरत नहीं पड़ती थी।

चित्रः 9.1.2 कृषि पर आधारित व्यवस्था

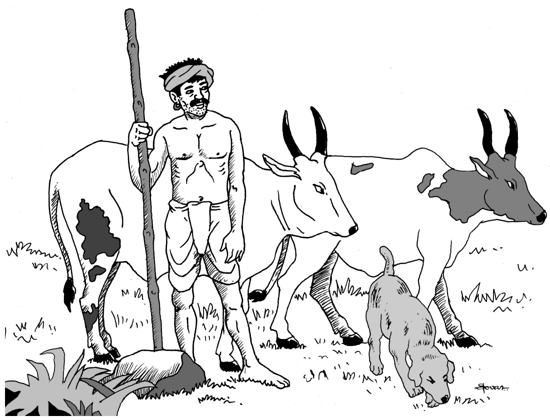

चित्रः 9.1.3 पशु पालन : कृषि का पूरक व्यवसाय

तब तक लैंगिक विभाजन बढ़ चुका था, लेकिन खेती और पशुपालन के काम से मानव समुदाय में स्थिरता (यानी कुछ समय के लिए एक जगह पर रुकना और घुमंतुपन कम होना) आने लगी थी, इसलिए उसमें महिलाओं की भूमिका बनी रही। यह भी माना जाता है कि तब तक "ताकत या शक्ति" के बारे में मानव को अहसास हो गया था, इसीलिए **"निजी संपत्ति"** की भावना आना शुरू हुई होगी। इसके बारे में पुख्ता सबूत नहीं हैं, किन्तु संभावना यही मानी जाती है। जिनके पास ज्यादा पशुधन या खेती का क्षेत्र होने लगा, वे अपने ही समूह में से दूसरे लोगों को इस काम में लगाने लगे। शुरू

में यह व्यवस्था **"स्थायी काम में सहयोग"** से शुरू हुई होगी, लेकिन बाद में संपत्ति और ताकत की भावना का कम या ज्यादा होना, झगड़े का कारण बना होगा और उन झगड़ों को निपटाने के लिए नियम बनाने की प्रक्रिया शुरू हुई। अगर गौर से देखें तो यहीं से एक मानव समूह में जमीन और पशु सबसे पहली संपत्ति बनते हुए नज़र आते हैं। ज्यादा समय के लिए खाने की सुरक्षा रहे, इसके लिए संग्रहण की सोच विकसित होती नज़र आती है। जब यह भावना आई कि ज्यादा जमीन, जंगल और पशुओं से हमें ज्यादा सुरक्षा मिलती है, तो ज्यादा संपत्ति का विचार पैदा हुआ। ज्यादा संपत्ति के रख–रखाव के लिए ज्यादा हाथों और ज्यादा श्रम की जरूरत पड़ी, तो दूसरों को काम पर रखा जाने लगा।

उत्तराधिकार से परिवार, समुदाय और राज्य व्यवस्था

ज्यादा संपत्ति और एक समूह में इसके कारण पैदा हुए प्रभुत्व से उत्तराधिकारी की अवधारणा आई कि एक व्यक्ति की मृत्यु के बाद वह संपत्ति किसकी होगी? संपत्ति के लिए तो किसी **"अपने"** का होना जरूरी माना गया; और वहाँ से परिवार की अवधारणा आई, जिसका जुड़ाव **"विवाह"** नामक व्यवहार से हुआ। संपत्ति की रक्षा के लिए बेहतर माना गया कि पुरुष (पहले पिता और फिर पुत्र) का ही संपत्ति पर नियंत्रण हो। इसके बाद उत्पादन के बढ़ने, ज्यादा संग्रहण और उसके मालिकाना हक से शुरू हुई प्रक्रिया **"ज्ञान"** के अहसास तक पहुँची। वस्तुओं के आदान–प्रदान, विनिमय और फिर लेन–देन की व्यवस्थाएं बनने लगीं।

अब जीवन के प्रमुख काम केवल खेती या पशुपालन तक ही सीमित नहीं थे। ये काम प्रकृति पर आधारित थे, इसलिए मानव समाज के मन में प्रकृति के प्रति भय या सम्मान या दोनों का स्थान बना, प्रायः हर रिश्ते में यह होता है और उसे निभाने के लिए हम कुछ व्यवहार करते हैं। प्रकृति को प्रसन्न रखने या अपना सम्मान दर्शाने के लिए पूजा–पाठ का व्यवहार बनाया गया। यह काम कुछ खास लोगों को दिया गया, यह मानते हुए कि जो ज्यादा ज्ञान रखते हैं या प्रकृति को परिभाषित करते हैं, वे प्रकृति को प्रसन्न रख पायेंगे। एक व्यापक रूप में देखें तो हमें पता चलता है कि समाज में संपत्ति धारण करने वाले, उसके यहाँ रह कर संपत्ति की देखभाल करने वाले, प्रकृति की उपासना करने वाले, व्यापार करने वाले और व्यापार करने वाले की मदद और सेवा करने वाले लोग अलग–अलग समूहों में पहचाने जाने लगे। इससे जाति व्यवस्था का निर्माण हुआ। इन्ही व्यवस्थाओं में हमें समुदाय भी नज़र आते हैं।

क्षेत्रीयता के आधार पर लोगों का समूह **"समुदाय"** का रूप लेने लगा। खास इलाकों में रहने वाले लोग एक खास समुदाय का रूप लेने लगे और प्राकृतिक संरचना, जलवायु और भौगोलिक परिस्थितियों के हिसाब से उनका चरित्र भी बनने लगा। समतल इलाकों में रखने वाले, पहाड़ी इलाकों में रहने वाले, रेगिस्तानी इलाकों में रहने वाले, बर्फीले इलाकों में रहने वाले, गरम इलाकों में रहने वाले लोगों के समुदाय परिस्थितियों के मुताबिक अपना व्यवहार और व्यवस्था बनाने लगे। जब हम अलग–अलग समुदायों को एक साथ देखते हैं, तब वह समाज का स्वरुप लेता है।

उत्पादन, संग्रहण और जरूरतें जैसे–जैसे बढ़ती गयीं, वैसे–वैसे बाज़ार ने एक रूप लिया। अब उत्पादन का मकसद केवल अपनी निजी–घरेलू जरूरतें पूरी करना नहीं रह गया था। वस्तु के एवज में नकद (धातु, वस्तु और फिर मुद्रा) पैसा पाने की प्रक्रिया तय हुई। अब समाज भी ज्यादा ढ़ांचागत रूप ले रहा था। व्यवस्था अब बहुत सरल नहीं रह गयी थी। वह जटिल हो गयी थी। जिसमें संग्रहण भी होने लगा था और लेन–देन भी; वहाँ बहस और टकराव भी होने लगे। इस सामाजिक व्यवस्था, जिसमें आर्थिक व्यवहार होने लगा था, को चलाने के लिए कौशल, धन के साथ–साथ नियमों की जरूरत महसूस की जाने लगी। इससे सामाजिक, आर्थिक वर्गीकरण होना शुरू हुआ। इसके कारण गैर–बराबरी और निहित हितों का प्रभाव दिखने लगा। टकराव और संघर्ष पैदा हुए। कुछ समुदाय बड़े इलाके पर अपना नियंत्रण स्थापित करना चाहते थे, इसलिए स्थानीय युद्ध भी होने लगे। समुदायों को पता था कि जिसके पास जितने ज्यादा प्राकृतिक संसाधन होंगे, उसकी ताकत उतनी ही ज्यादा होगी और वह उतना ही सुरक्षित भी होगा। अपने क्षेत्रीय प्रभुत्व को बनाने, उसे बचाने, संघर्षों से निपटने, विवादों को हल करने के लिए एक व्यवस्था पैदा हुई, जिसे हम **"राज्य व्यवस्था"** कहते हैं।

9.1.2 समुदाय की अवधारणा

यह बात स्पष्ट है कि जिस तरह से मानव समाज का विकास हुआ है, उसमें केवल प्रकृति ने ही मुख्य भूमिका नहीं निभायी है। वास्तव में लैंगिक नियंत्रण, संपत्ति पर नियंत्रण, संपत्ति का रख–रखाव, उत्तराधिकार बनाये रखने के लिए मानव खुले और संरचनाविहीन समूहों से बंद और संरचना वाले समूहों में आया। इन समूहों ने समुदाय का रूप लिया। समुदाय एक समान हित या हितों के आस–पास केंद्रित समूह होता है। ये हित धार्मिक हो सकते हैं। आर्थिक, सामाजिक या राजनीतिक हो सकते हैं। अक्सर ये हित दीर्घकालिक होते हैं। व्यापक तौर पर हिंदू एक समुदाय भी है, किन्तु उसके भीतर भी जातियों और उप–जातियों के सन्दर्भ में समुदायों का अस्तित्व बनता गया। जैन धर्म से एक व्यापक समुदाय बनता है। जैन धर्म के भीतर दिगंबर और श्वेताम्बर समुदाय बनते हैं।

चित्रः 9.1. मानव समूहों का क्रमिक विकास

सामाजिक ताने–बाने में अपनी हितों को हासिल करने और बनाए रखने के लिए लोग मिलते हैं और समुदाय का रूप ले लेते हैं। किसान अपने आप में एक समुदाय है, मजदूर भी समुदाय है, तीसरे लिंग के लोग मिलकर एक समुदाय बनते हैं। ये समुदाय जानते हैं कि अकेले रहकर वे अपनी पहचान और शक्ति खो देंगे। उन्हें उनके वाजिब हक नहीं मिल पायेंगे या सामाजिक–आर्थिक बदलाव का लाभ उन्हें नहीं मिल पायेगा। समुदाय को परिभाषित करने का मतलब है खुद को परिभाषित करना। हम जैसे ही लोगों से मिलकर बना समूह समुदाय हो जाता है।

आपकी सोच में **समुदाय** शब्द के क्या मायने हैं। क्या वास्तव में इसका अर्थ बाहर से लिया जा सकता है? **समुदाय** का अर्थ हम सबके लिए एक खास सन्दर्भ रखता है। हम इस शब्द को दो भागों में बांटकर देखते हैं यानी इसका संधि विच्छेद करते हैं, तब दो शब्द निकलते है – ***"समु"*** यानी समूह या सामूहिक और ***"दाय"*** यानी विरासत या परंपरा से प्राप्त।

समुदाय का एक अर्थ तो यह हुआ कि व्यक्तियों या लोगों के एक समूह को विरासत या परंपरा से जो स्वरूप, ज्ञान, जानकारी, संस्कृति, भाषा और व्यवहार मिलता है, उसे संभालने वाला वाला समूह। किसी को मिट्टी से बर्तन गढ़ने का ज्ञान और कौशल मिला, उनका समूह कुम्हार बना। किसी को रत्न पहचानने का ज्ञान और कौशल मिला, उनका समूह जौहरी बना। ये कौशल और काम के आधार पर बने हुए समुदाय है।

समुदाय को अंग्रेजी में ***"कम्युनिटी"*** कहा जाता है। दुनिया के जाने–माने शब्दकोष आक्सफोर्ड शब्दकोष के मुताबिक कम्युनिटी शब्द दो शब्दों को मिलकर बना है – ***कॉम*** और ***म्युनिस।*** इन दो शब्दों का मतलब होता है – कॉम यानी **"एक साथ"** और म्युनिस यानी ***"सेवा/मदद करना"***। इस आधार पर यह माना जाता है कि लोग मिलकर एक समूह का निर्माण करते हैं ताकि मिलकर एक –दूसरे की मदद की जा सके।

समाजशास्त्र में "समुदाय" को इस तरह से परिभाषित करते हैं –

भारतीय सन्दर्भ में समुदाय लोगों के ऐसे पारंपरिक समूह को कहा जाता है, जो किसी न किसी एक खास सामाजिक समूह के रूप में पहचान रखते हैं; **जैसे**– जाति, गांव का एकरूप समूह, या एक खास धर्म को मानने वालों का समूह। इन समूहों को इसलिए भी समुदाय के रूप में पहचाना जाता है क्योंकि प्राकृतिक रूप से उनके करीबी रिश्ते (खून के सम्बन्ध) होते हैं, उनकी भाषा, व्यवहार, रीति–रिवाजों, इतिहास और भौगोलिक विस्तार में बहुत हद तक समानता होती है। समुदाय व्यापक समाज के भीतर का एक हिस्सा होता है, वह खुद पूरा समाज नहीं होता है। समाज में ज्यादातर विविधता होती है जबकि समुदाय में ज्यादातर एकरूपता होती है।

जब लोग एक समूह में रहते हैं। उनकी एक–दूसरे पर आपस में गहरी सामाजिक निर्भरता होती है। उनके अनुभव समान होते हैं। अक्सर उनके काम भी मिलते–जुलते होते हैं। उनकी भाषा भी एक जैसी होती है। उनकी रूचियाँ और सामाजिक व्यवहार में भी एकरूपता होती है। लोगों के ऐसे ही समूह को समुदाय कहा जाता है। यद्यपि समुदाय और समाज में बहुत सी समानताएं होती हैं किन्तु कुछ विशिष्ट भिन्नताओं के कारण इन्हें अलग–अलग समझना अवधारणात्मक स्पष्टता के लिए आवश्यक है। (विस्तृत जानकारी समाज कार्य के मॉड्यूल्स में दी गई है।)

"समुदाय" शब्द के मायने अलग–अलग स्थितियों में नया रूप लेते हैं। हो सकता है कि एक गांव या बस्ती में भील आदिवासी भी रहते हों और गोंड़ भी; ऐसे में भील आदिवासी जनसँख्या को मिलाकर जो समूह बनता है, गांव के भीतर की वह भील समुदाय कहा जाएगा। भील और गोंड़ समूह के व्यवहार और सामाजिक संरचना में अंतर है। किन्तु जब उस बसाहट के बाहर किसी दूसरे स्थान पर उस गांव की पहचान होगी, तब उसे पहले आदिवासी समुदाय का गांव माना जाएगा। वहां सबसे पहले भील या गोंड़ आदिवासी समूह के पहचान नहीं आती है। इसका कारण यह है कि विभिन्न आदिवासी समूह एक खास पहचान रखते हैं। जैसे उनका प्राकृतिक जीवन शैली और संस्कृति में विश्वास रखना।

यह जरूरी नहीं है कि एक धर्म एक समुदाय ही हो। किसी भी धर्म के भीतर कई समुदाय हो सकते है। हिंदू धर्म के भीतर शैव, वैष्णव जैसे अनेक समुदाय हैं। वास्तव में सामाजिक और आर्थिक स्थितियां भी समुदाय को एक रूप देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

9.1.3 समुदाय की प्रकृति

संक्षेप में समुदाय का मतलब है– पास–पास (यानी भौगोलिक रूप से करीब रहना) रहने वाले लोगों का एक–दूसरे से जुड़ाव होना और उनमें एक–दूसरे से जुड़े होने की भावना और सामूहिकता का अहसास होना।

जुड़ाव का मतलब क्या है? – एक समूह में आपसी जुड़ाव एक ही स्थान या क्षेत्र में रहने वाले समूह के बीच भाषा, आजीविका, सांस्कृतिक व्यवहार, जाति, सामाजिक मूल्यों, रीति–रिवाजों और मान्यताओं में समानता होने से बनता है।

नृत्य–गीत, त्यौहार, रिश्तों का होना, सांस्कृतिक व्यवहार समुदाय की भावना को गहरा बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पारंपरिक ढ़ाँचे में हम देखते हैं कि समाज में एक समूह लोहे का काम करने में पारंगत रहा, तो उसने समाज में कौशल के कारण एक खास जगह पायी। इसी तरह लकड़ी का काम करने वाले समूह ने एक अलग पहचान पाई। बांस का काम करने वालों ने समाज की एक खास जरूरत को पूरा किया। कोई तो था इस समाज में जो बुनकरी के काम में माहिर था। इन सबके कौशल और काम के साथ कोई न कोई गीत जुड़े थे और सांस्कृतिक व्यवहार भी।

कुम्हार	लुहार	बढई

चित्र 9.1. विविध जीवन कौशलों पर आधारित समुदाय

लुहार, बढ़ई, बुनकर, खेतिहर कामगार ये सब किसी न किसी कौशल में माहिर थे। इन कौशलों के कारण गांव की अर्थव्यवस्था में इनकी बहुत महत्वपूर्ण भूमिका रही। समय परिवर्तन के साथ जाति व्यवस्था की विसंगतियों ने सामाजिक व्यवस्था में उन्हें नीचा दर्ज़ा दिया और वे भेदभाव का शिकार हुए। उनके हाथ में संसाधनों का नियंत्रण नहीं रहा। परिणाम स्वरूप वे **वंचित समुदाय** हो गए।

समुदाय की परिभाषा में एक ही भौगोलिक क्षेत्र में रहने वाले लोगों से मिलकर समूह का रूप लेने की बात को ज्यादा महत्व दिया जाता है।

इन सन्दर्भों में हम देखते हैं कि कुछ बातें समुदाय की प्रकृति को स्पष्ट रूप से सामने लाती हैं –

1. लोगों का एक समूह में होना।
2. भौगोलिक दायरा यानी पास–पास रहने वाले लोगों के समूह समुदाय का रूप लेते हैं।
3. सामाजिक विचार–व्यवहार में आदान–प्रदान; लोगों का वही समूह समुदाय का रूप लेता है जो सांस्कृतिक व्यवहार और रीति–रिवाजों के आधार पर एक–दूसरे से करीब होना महसूस करता है। लोगों का एक समूह मूलवंश और जाति के आधार पर भी समुदाय का रूप ले लेता है।
4. साझा सम्बन्ध; उनमें एक–दूसरे से जुड़ाव होने की भावना होती है।

इनमें से एक या एक से ज्यादा बिंदु लोगों के किसी समूह को समुदाय का रूप देने की शुरुआत कर सकते हैं। हमें यह ध्यान रखना होगा कि एक समुदाय हमेशा सौम्य और सहयोगी ही नहीं होता है। जैसे हम कई परिवारों में भी देखते हैं कि परिवार के भीतर ही कई नकारात्मक स्थितियां विद्यमान होती हैं। उसी तरह समुदाय भी क्रूर और नकारात्मक हो सकता है।

समुदाय कुछ मूल्यों पर आधारित होता है। इन मूल्यों में पितृसत्तात्मकता, दमन, सामाजिक बहिष्कार, अलोकतांत्रिक प्रवृत्ति भी हावी होती है। कुछ स्थानों पर सामुदायिक खाप पंचायतों ने प्रेम संबंधों के मामले में क्रूर नजरिया अख्तियार किया और प्रतिष्ठा के नाम पर हत्याएं की गयीं। एक समुदाय वास्तव में व्यापक समाज का एक दर्पण भी होता है। जो कुछ भी हमारे समाज में होता है, उसका जुड़ाव समुदाय और उसकी पहचान से होता है।

9.1.4 समुदाय के प्रकार

हम यदि अपने आस–पास नज़र डालें, तो हमें अंदाज़ा हो जाएगा कि समुदाय कितने प्रकार के होते हैं। हमें यह ध्यान में रखना होगा कि कोई भी समुदाय प्रकृति से जड़ और अपरिवर्तनशील नहीं होता है। उनमें समय, स्थान और जरूरत के आधार पर परिवर्तन होते रहते हैं। समुदाय सक्रिय होते हैं। वे कुछ न कुछ करते रहते हैं। वे विचार करते हैं। उनके भीतर ही पक्ष और विपक्ष होते हैं। वहां टकराव भी होते हैं। बहुत उतार–चढ़ाव होने पर भी वे आसानी से टूटते नहीं हैं। समुदाय एक गतिशील इकाई होती है, इसलिए उसमें बदलाव होते रहते हैं।

निर्णायक तौर पर यह तो कहना मुश्किल ही होता है कि समुदाय कितने प्रकार के होते हैं; किन्तु उनके चरित्र के आधार पर माना जाता है कि समुदाय पांच प्रकार के हो सकते हैं –

1. ग्रामीण और शहरी समुदाय।
2. भौगोलिक समीपता/दायरे के आधार पर बना समुदाय।
3. पहचान के आधार पर बना समुदाय।
4. खास लक्ष्य/हित के लिए बना समुदाय।
5. अंतर्राष्ट्रीय समुदाय।

आइये इन्हें थोड़ा विस्तार से समझते हैं –

1. **ग्रामीण और शहरी समुदाय** – इन समुदायों की कोई सर्वमान्य परिभाषा करना कठिन है। फिर भी समाजशास्त्र के अध्यापक **आनंद कुमार** की पुस्तक **"भारत में ग्रामीण जीवन"** के मुताबिक ग्रामीण समुदाय प्राथमिक रूप से कृषि जीवन पर आधारित प्राथमिक संबंधों और कम जनसंख्या वाला सरल समुदाय है। इनकी शुरुआत शिकार करने और फल–फूल–जंगल के उत्पाद इकट्ठा करने से हुई। फिर पशुपालन और चरवाहा अवस्था आई। बाद में खेती की व्यवस्था बनी। कौशल आधारित भूमिका पर एक खास वर्ग के द्वारा संसाधनों के नियंत्रण के कारण अस्तित्व में आई सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था के कारण ग्रामीण समुदाय में जाति आधारित व्यवस्था बनी। जिसने ग्रामीण समुदाय में जाति के आधार पर समुदाय को नए रूप दिए।

   शहरी समुदाय मुख्यतः दो कारणों से अस्तित्व में आया दृढ़ प्रशासन और व्यापार। समय के साथ–साथ शहरी समुदाय में समुदाय के नए रूप पैदा हुए। जैसे झुग्गी बस्तियों में रहने वाला समुदाय।

2. **भौगोलिक समीपता के आधार पर बना समुदाय** – भौगोलिक सीमा रेखाओं के भीतर रहने वाले समूह को इस तरह का समुदाय माना जाता है। नदियों, पहाड़, मैदान या मार्गों की पहचान से समुदाय एक रूप लेता है। हमारा इतिहास बताता है कि प्राकृतिक संसाधनों, जैसे नदियों के आस–पास सभ्यताएं विकसित हुईं। हर सभ्यता के विकास से तत्कालीन समुदायों की विशेषताएं जुड़ी हुई दिखाई देती हैं। जैसे – समुदाय के खेती करने के तरीके, खान–पान, बर्तनों का निर्माण आदि।

   शहरी क्षेत्रों में बस्तियों और रहवासों की सीमाओं से समुदाय की पहचान होती है। जाति, धर्म, आर्थिक रूप से संपन्न या विपन्न समुदाय। इस तरह के समुदाय में कोई एक जाति या एक खास समूह नहीं होता है। एक बस्ती के समुदाय में अलग–अलग जाति और पहचान वाले लोग हो सकते हैं। शहर में किस बस्ती में कौन से समूह के लोग रहते हैं और कौन से बस्ती शहर के स्वच्छ इलाके में स्थित हैं और कौन सी गंदे पानी के नालों के पास; इससे समुदायों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति का आंकलन किया जा सकता है। उदाहरण के लिए– **मालवी, बुन्देलखण्डी, बघेली समुदाय।**

3. **पहचान के आधार पर बना समुदाय** – ऐसे लोगों का समूह पहचान आधारित समुदाय माना जाता है जिनकी संस्कृति समान होती हैं। इसमें संगीत, भाषा–बोलियां, धर्म, रीति–रिवाज़, सामाजिक मूल्य शामिल हैं। उदाहरण के लिये आदिवासी समाज का मतलब है भारत में 700 आदिवासी समुदाय। वे किसी राज्य में या किसी एक

भौगोलिक सीमा में नहीं रहते हैं। आदिवासी समाज की अपनी एक विशिष्ट पहचान है और आदिवासी समुदाय में भील, गोंड़, बैगा, कोल, मवासी, कोरकू समुदायों की अपनी पहचान है।

4. **खास लक्ष्य/हित के लिए बना समुदाय** – इस तरह के समुदाय में किसी खास लक्ष्य को हासिल करने के लिए बने समूह को रखा जाता है। इसका मतलब है कि समाज के प्राकृतिक संसाधनों के अधिकार को लेकर कुछ लोग इकट्ठा हुए हों। उनके अपने मूल्य होते हैं और कार्य शैली भी। इसमें जनसंगठन और सामाजिक आंदोलन होते हैं। साथ ही राजनीतिक दल भी इसमें शामिल होते हैं। ये समुदाय स्थानीय भी होते हैं और वैश्विक भी। उदाहरण– कृषक समुदाय और मजदूर समुदाय।

5. **अंतर्राष्ट्रीय समुदाय** – जब किसी एक हित, मकसद, विचार या सोच या लक्ष्य को लेकर अंतर्राष्ट्रीय समूह एकजुट होते हैं और काम करते हैं, उस समूह को अंतर्राष्ट्रीय समुदाय कहा जाता है। कई बार वैश्विक स्तर पर लोग हमें एक साथ एक समूह में सामने खड़े हुए दिखाई नहीं देते हैं; किन्तु वे अपनी जगह से उस विचार के साथ होते हैं। जैसे दुनिया के कई देशों में ऐसे समूह बने हैं जो मानते हैं दुनिया में कहीं भी परमाणु हथियार नहीं होना चाहिए। दुनिया में कई लोग मिलकर एक समूह बनाते हैं, जो यह मानते हैं कि हमें विकास के लिए गांधीवादी मूल्य अपनाना चाहिए। ये समूह किसी राज्य, देश या महाद्वीप में सिमटे नहीं होते हैं। यह एक तरह का विश्वास होता है। ये समूह औपचारिक या अनौपचारिक तौर पर एक दूसरे से जुड़े होते हैं। उदाहरण– संयुक्त राष्ट्र संघ, दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन, यूरोपीय संघ।

9.1.5 समुदाय और राज्य व्यवस्था के बीच सम्बन्ध

एक व्यक्ति से एक परिवार, एक परिवार से एक समुदाय और एक समुदाय से व्यापक समाज का हिस्सा होने तक हमने लाखों सालों का सफर किया है। इस विषय के सबसे पहले अध्याय में हमने जाना था कि राज्य की व्यवस्था की शुरुआत कैसे हुई? सवाल यह उठता है कि राज्य की व्यवस्था बनने के बाद समुदाय और समाज का स्थान कहाँ होता है? क्या राज्य समाज का शासक बन जाता है?

जवाब है – नहीं! राज्य समाज का शासक नहीं होता है। लोकतंत्र में तो नागरिक ही सर्वोपरि होता है। यह बात महत्वपूर्ण है कि राज्य व्यवस्था के आने के बाद हमें समाज और राज्य के बीच के संबंधों के बारे में जानना जरूरी हो जाता है। यह स्पष्ट होना जरूरी है कि राज्य और समाज के दायरे कहाँ तक हैं और उन दायरों का मानचित्र कैसे बनता है?

9.1.6 मानव समाज – निजी व्यवस्था से राज्य व्यवस्था तक

हमारा जीवन दो तरह की व्यवस्थाओं से मिलकर बनता हैं। एक – वे व्यवस्थाएं, जिन पर हमारा नियंत्रण है; जैसे हमारा अपना व्यवहार, हम क्या खाते हैं, कैसे मेहनत करते हैं, आपस में कैसा व्यवहार करते हैं, महिलाओं के साथ समानता का व्यवहार करते हैं या नहीं, बच्चों की देख–रेख की हमारी अपनी व्यवस्था कैसी है, खेती, कला, प्राकृतिक संसाधनों के बारे में हमारा ज्ञान कैसा है और उनका संरक्षण कैसे किया जा सकता है। कुल मिलाकर हमारा निजी और सामाजिक व्यवहार और प्रकृति से हमारे रिश्ते।

इसके साथ ही दूसरी, वे व्यवस्थाएं, जिन पर केवल हमारा ही नियन्त्रण नहीं है। उसमें दूसरे व्यक्ति या समुदाय भी प्रभावित होते हैं। ऐसी व्यवस्थाओं को बनाने में एक व्यापक पहल की जरूरत होती है। ये पहल करती है– **सरकार**। मान लीजिए कभी कोई आपदा आ जाए, तब बहुत सारे राहत के कामों की जरूरत पड़ती है, वे काम सरकार करती हैं। देश की सुरक्षा करना या दूसरे देशों के साथ सम्बन्ध बनाना, हमारे आस–पास, गांव या शहर में या किसी भी राज्य में कहीं कोई अपराध न हो, इसके लिए क़ानून–व्यवस्था बनाना; यह काम सरकार करती है। इसके साथ ही समाज के भीतर गैर–बराबरी, भेदभाव, छुआछूत जैसी स्थितियां खत्म हों, इसके लिए नियम भी बनाने पड़ते हैं कि यदि कोई छुआछूत करेगा या कोई हिंसा करेगा, तो उसे सजा दी जा सकती है। सजा देने के नियम सरकार बनाती है।

समाज और राज्य के बीच सम्बन्ध

एक रूप में समाज और सरकार (यहाँ राज्य के सन्दर्भ में) के बीच एक गहरा रिश्ता बने, उनके बीच विरोधाभास न हो और टकराव भी न हो, इसके लिए दोनों के बीच एक तरह का अनुबंध होता है।

समाज स्वस्थ, सुरक्षित, शान्ति और समानता के आधार पर आगे बढ़े, इसके लिए सरकार को यह जिम्मेदारी दी गयी है कि वह जरूरी व्यवस्थाएं बनाए और उन्हें लागू करे। हर व्यक्ति का जीवन अच्छा बने, उन्हें अपनी गरिमा और आत्मसम्मान का त्याग न करना पड़े, उनके पास रोज़गार हो, कोई व्यक्ति भूखा न रहे, बीमार होने पर उन्हें अच्छा इलाज़ मिल सके, हर बच्चे को पढ़ने–लिखने का अधिकार हो, हर व्यक्ति अपनी श्रद्धा और विश्वास के मुताबिक अपने चुने हुए धर्म का पालन करने के लिए स्वतंत्र रहे आदि। इसके लिए सरकार की जिम्मेदारी है कि वह अलग–अलग तरह की व्यवस्थाएं बनाये। एक तरह से समाज ने सरकार को ऐसी जिम्मेदारियों को निभाने के लिए नियुक्त किया है। बदले में हम उन्हें क़ानून बनाने, सजा देने और कर लगाने का अधिकार देते हैं।

समाज और सरकार के रिश्ते जिस अनुबन्ध या व्यवस्था से संचालित और नियन्त्रित होते हैं उसे हम संविधान कहते हैं। संविधान शब्द बनता है – **सम** यानी समानता और **विधान** यानी विधि या क़ानून। अर्थात् समानता के लिए समान क़ानून।

सरकार की जिम्मेदारी

जब हम कहते हैं कि सरकार के पास ये सब जिम्मेदारियां हैं, तब इसका मतलब है कि उनके पास व्यवस्था बनाने के लिए कुछ अधिकार भी हैं। सरकार नियम, क़ानून और नीतियां बनाती है। यह समाज की जिम्मेदारी है कि वह सरकार के द्वारा बनाये गए नियमों, कानूनों और नीतियों का सम्मान करे। उनका पालन करे।

अब प्रश्न उठना है कि क्या सरकार कभी भी, कोई भी क़ानून अपने मन से बना सकती है? नहीं। कानून बनाने की व्यवस्था, उसे लागू करने के प्रावधान और कानून तोड़ने वाले के लिये सजा के नियम जिस दस्तावेज में वर्णित हैं उसे संविधान कहते हैं। भारत के संविधान और उसकी विशेषताओं के बारे में हम इस वर्ष के **मॉड्यूल–12 विधिक साक्षरता** की प्रथम इकाई में विस्तार से जानकारी प्राप्त करेंगे। संक्षेप में यहां इतना स्पष्ट करना चाहेंगे कि व्यापक विचार–विमर्श के बाद बने संविधान को भारत ने 26 नवम्बर 1949 को अंगीकार किया था। यह संविधान 26 जनवरी 1950 को हमारे देश में लागू हुआ। इसीलिए 26 जनवरी को प्रतिवर्ष हम गणतन्त्र दिवस मनाते हैं। और नागरिक दायित्वों के प्रतिबद्धता के साथ पालन करने की शपथ लेते हैं।

9.1.7 समुदाय और राज्य व्यवस्था के बीच की डोर – संविधान

हमारा देश किन सिद्धांतों का पालन करेगा? हमारे यहाँ शासन के मूलभूत सिद्धांत क्या होंगे? हमारी व्यवस्था में कौन–कौन से हिस्से होंगे? उनकी जिम्मेदारियां और दायित्व क्या होंगे? यदि कहीं कोई सुधार की जरूरत है, तो वे सुधार कैसे किये जायेंगे? इन सब बातों का उल्लेख एक किताब में है। उसी किताब को संविधान कहते हैं।

दूसरे अर्थों में संविधान एक अच्छी व्यवस्था को बनाने के लिए तय किये गए सिद्धांतों, नियमों, काम करने की प्रक्रिया, दायित्वों और अधिकारों को परिभाषित करने वाली किताब है। जिसका पालन करना हमारे समाज और सरकार दोनों के लिए जरूरी है।

हम कैसा समाज बनाना चाहते हैं? इसकी अभिव्यक्ति हमारे संविधान निर्माताओं ने इसकी प्रस्तावना में प्रस्तुत की है –

"हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व संपन्न, समाजवादी पंथ निरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त करने के लिए तथा उन सबमें व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए दृढ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवम्बर 1949 को एतदद्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।"

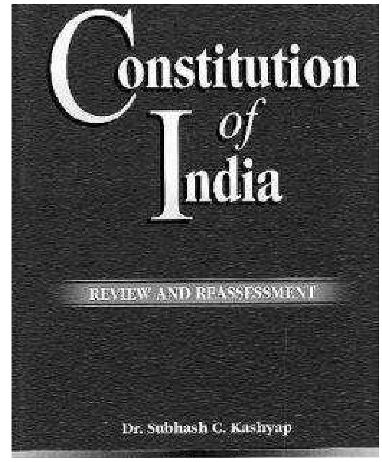

चित्र 9.1. संविधान

हमारे संवैधानिक मूल्य

- संविधान का मकसद एक ऐसी लोकतांत्रिक और पंथ निरपेक्ष व्यवस्था का निर्माण करना रहा है जो लैंगिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक गैर–बराबरी को मिटाए।
- एक ऐसे समाज का निर्माण हो जिसमें जाति, धर्म और लिंग के आधार पर भेदभाव न हो।
- हर नागरिक स्वतंत्र हो।
- बच्चों, महिलाओं, वंचित तबकों, किसानों, मजदूरों और उपेक्षितों को गरिमामय जीवन का हक मिले।
- पर्यावरण का संरक्षण हो और संसाधनों का अहितकारी वितरण न हो।
- हम ऐसी व्यवस्था बना सकें, जिसमें न्यायपालिका, कार्यपालिका और विधायिका अपनी अपनी जिम्मेदारी को निभाएं।
- किसी किस्म की निरंकुशता न हो और
- एक सभ्य समाज के निर्माण में राज्य और नागरिक दोनों अपनी भूमिका निभाएं।

9.1.8 : सामुदायिक संगठन के मायने

इस इकाई के प्रारम्भ में हमने समुदाय के उद्‌भव, विकास, प्रकृति और प्रकारों से संबंधित महत्वपूर्ण चर्चा की है। आइये अब सामुदायिक संगठन के अर्थ और आयामों को अच्छी तरह से समझने का प्रयत्न करते हैं। शब्द अपने आप में अर्थ भी बताते हैं। सामुदायिक संगठन शब्द भी अपना अर्थ बताता है। इसमें दो शब्द हैं – **सामुदायिक** यानी समुदाय का और **संगठन** यानी एक समूह का बनना। समुदाय का संगठन। बस इतना सा अर्थ है। जब किसी लक्ष्य को हासिल करने या समस्या के समाधान के लिए लोग एकजुट होकर पहल करने का निर्णय करते हैं, उसे सामुदायिक संगठन के निर्माण के रूप में देखा जाता है।

सामुदायिक संगठन का मतलब है जब एक समुदाय या कई समुदाय मिलकर किसी समस्या हो हल करने या किसी स्थिति को बदलने के लिए मिलकर पहल करते हैं। वह एकजुटता जिस **समूह को आकार** देती है उसे ही सामुदायिक संगठन कहते हैं। इसे एक सच्ची कहानी से समझते हैं। इस कहानी के तीन महत्वपूर्ण पहलू हैं –

- समस्याओं, मुद्दों और चुनौतियों को पहचानने का सबसे सटीक काम केवल और केवल समाज ही कर सकता है।
- समस्याओं के समाधान को खड़ा करने का काम भी केवल और केवल समाज ही कर सकता है।
- जब समाज संगठित रूप से कोई पहल करता है, तो उसे सरकार के खिलाफ नहीं माना जाना चाहिए।

समुदाय में संगठन – भीतर छिपी एक सोच है; यह बाहर से नहीं आती।

कहानी मध्यप्रदेश के डिंडोरी जिले के बैगाचक इलाके के ढाबा गांव की है। छोटा सा गांव है 20–25 परिवारों का। 16–17 साल पहले बैगा आदिवासियों के इस गांव ने संभवतः पहली बार देखा कि तालाब सूख गया। खेतों की नमी लगभग खत्म हो गई। पशुधन के लिए संकट खड़ा हो गया। जंगल से मिलने वाले 10 तरह के कंद मिलना भी कम हो गए। इस स्थिति में उन्होंने कोशिश की और एक हजार हेक्टेयर जंगल खत्म होने से बचा लिया।

समुदाय मिलकर स्थिति का आंकलन करता है – ढाबा गांव के सभी परिवार एक साथ बैठे। सोचा, आखिर ऐसा क्यों हो रहा है? सभी बुजुर्गों को बिठाया। उनसे कहा कि वे गांव के बारे में सभी को बताएं कि गांव, जंगल, समाज और हम सब आखिर बनते कैसे हैं? बातचीत में लोगों ने जाना कि पेड़ों से जंगल बनता है, जंगल में 10 तरह के कंदों, 61 तरह के वृक्षों 69 प्रकार के पक्षियों और 72 से ज्यादा तरह के औषधीय पौधों का परिवार होता है। 30–40 सालों में जब जंगल कटे तो उनका घनापन कम हो गया। इससे जमीन की नमी कम हुई, कई वनस्पतियाँ समाप्त हो गयीं। एक

समय आया जब जंगल को केवल राजस्व का जरिया मान लिया गया। यही वह समय था जब यह भावना आने लगी कि जंगल तो सरकार का है, वही उसकी रक्षा करे। हम क्यों करें? लेकिन अब हमें समझ आता है कि हमें जंगल और पर्यावरण की रक्षा करनी होगी ताकि जीवन बचा रहे।

समुदाय समस्या को स्पष्ट रूप से समझता है – हम सोच नहीं सकते थे कि जंगल कभी खत्म भी हो सकता है। परन्तु 1980–82 और 1998–2001 में यह लगने लगा कि हाँ, जंगल खत्म हो रहा है। इन्हीं दो मौकों पर लगा कि जंगल के बिना हम नहीं रह सकते। भूखे पेट सोने की नौबत आई, बच्चों में कमजोरी (कुपोषण) पैदा हुई। फूलवती बाई बताती है कि जंगल का मतलब केवल लकड़ी नहीं है, इससे जीवन चलता है। हमारे लिए जंगल बचाने का मतलब अपने धर्म, आस्था और संस्कृति के साथ आदिवासी अस्मिता को बचाना है। बरगद में बरमदेव का वास है, पीपल में करोड़ों देवता हैं, अचार के पेड़ की डाल से शादी का मड़वा बनता है, डुमार जलाने से खटमल पैदा होते हैं इसलिये जलाते नहीं हैं; पकरी के पेड़ से फल और भाजी मिलती है, कटोरी के पेड़ से बैलों की जुंवाड़ी बनती है। जंगल के बिना हम नहीं हैं।

समुदाय समस्या के कारणों को खोजता है – जब संकट बड़ा तब भी पेड़ों की कटाई जारी थी। गांव के लोगों ने अपने आस–पास को अच्छे से समझा। तय किया कि वे जंगल कटने नहीं देंगे। समझा कि जंगल नहीं बचाया तो पर्यावरण खत्म हो जाएगा। कुछ लोगों के लिये जंगल कमाई का साधन मात्र है पर हमारे लिये तो यह जीवन है।

2001–02 में 12 गांवों के आदिवासियों ने जंगल बचाने के विचार को हकीकत में बदलने का जतन किया। 3200 हेक्टेयर की वनस्पतियों, वृक्षों और झाड़ियों को बचाया। मनियारों बाई बैगा के मुताबिक तब स्थिति यह थी कि हमें तब लाख, अचार (चिरौंजी) तेंदू पत्ते और फल, मूसली और कांदे मिलना भी मुश्किल होने लगा था। जंगल बचाना शुरू किया तो तीन–चार साल में ही स्थिति बदलने लगी।

संगठन अपने मकसद पर लगातार काम करता है – 2004 में भालूमुढ़ा गांव के जंगल में 4000 पेड़ों की कटाई के लिये निशान लगाए थे। कटाई के लिए 25 किमी दूर रजनी सरई गांव से मजदूर लाए गए ताकि विरोध न हो। तब सामुदायिक संगठन के विरोध पर राजस्व अधिकारियों ने कटाई रुकवाई, केवल 200 पेड़ ही कट पाए। 2007 में पुनः 3000 पेड़ों की कटाई के लिए निशान लगाए गए। संगठन ने फिर विरोध किया तो कुछ ही पेड़ कट पाए। इस दौरान विभाग और संगठन के बीच बहस होती रही। अंततः अधिकारियों ने माना कि संगठन की बात पर्यावरण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

समुदाय खुद के लिए भी नियम तय करता है – जंगल बचाने की पहल शुरु हुई तो समुदाय ने खुद कुछ नियम बनाए।

पहला नियम – समुदाय कभी कच्चे और जिन्दा पेंड़ नहीं काटेगा।

दूसरा नियम – जंगल में न तो आग लगाएंगे, न लगाने देंगे। कई बार विभाग द्वारा सफाई करने के दौरान, कई बार प्रभावशाली परिवार जंगली जानवरों के शिकार के लिए तो कभी बीड़ी पीने के कारण जंगल में आग लग जाती थी। चपवार गांव के **बसोरी सिंह मरावी** बताते हैं कि आग लगने से नमी भी खत्म हो जाती है और हमें कंद, जड़ी–बूटी भी नहीं मिल पाते। कीट, सांप और पक्षी, जो जंगल के जीवन में संतुलन लाते थे, भी खत्म होने की कगार पर आ गए।

तीसरा नियम – जंगल में कुल्हाड़ी ले जाने पर रोक लगाई गई। **रामबाई** बताती हैं कि पहले जानवरों को चराने के दौरान कुल्हाड़ी साथ लेकर जाते थे; परन्तु खेल–खेल में छोटे पौधे काट देते थे या पेड़ों पर कुल्हाड़ी चला देते थे, इससे भी नुकसान होता था। हमने तय किया कि कुल्हाड़ी की जगह डण्डे लेकर जाएँगे। यह आत्मस्वीकार्य नियम है।

चौथा नियम– लघु वनोपज के लिये पेड़ों को मूल तने से नहीं काटा जाएगा। एक समय था जब चिरौंजी, तेंदूफल या आंवलों के लिये पेड़ काट दिये जाते थे, इससे बड़ा नुकसान हुआ। बाहरी व्यापारी और बिचौलिए आदिवासियों को लालच दिखाकर पेड़ कटवाते रहे। **शंकर सिंह** बताते हैं कि इस तरह के पेड़ काटने पर आदिवासियों को क्या मिलता था – 40 या 50 रूपये बस। बिना निगरानी के तो जंगल बचाया ही नहीं जा सकता है।

पांचवा नियम– हम अपने जंगल की निगरानी करते रहेंगे। जब किसी काम से वहां से गुजरें तो नजर रखें कि कहीं कटाई तो नहीं हो रही, आग तो नहीं लगी है। न भी गुजरें तो जंगल के हाल–चाल लें।

इस पहल में उन्हें सरकार के सामने भी खड़े होना पड़ा क्योंकि सरकार भी जंगल को काटने का काम करती है और फिर लकड़ी को विभिन्न उपयोग के लिए नियमों के तहत बेचा जाता है। सामुदायिक संगठन ने सिद्धांतों की बात की कि यदि यहाँ के 3 हज़ार हेक्टेयर जंगल को मिटने से बचाना है तो हर तरह की कटाई रोकी जानी चाहिए। कटाई रुकी भी। लोगों ने मिलकर उस समस्या को पहचाना, जो न केवल उनके समुदाय के लिए चुनौती बन रही थी, बल्कि वह एक वैश्विक समस्या भी है। इस पहल का सन्देश यह भी है कि बड़ी समस्याओं के हल छोटा सा समूह भी कर सकता है।

9.1.9 : सामुदायिक संगठन का अस्तित्व में आना

समुदाय जब किसी विपरीत स्थिति या समस्या या किसी खास परिस्थिति का सामना करता है, तब वह खुद उसके बारे में विश्लेषण करता है। इस सन्दर्भ में वह जब इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि उस समस्या के लिए समुदाय को ही संगठित होकर कोई पहल करनी होगी। तब सामुदायिक संगठन के निर्माण की भूमिका बनती है।

इस संगठन के निर्माण में अक्सर सबसे पहले वो लोग अहम् भूमिका लेते हैं, जो खुद समस्या से प्रभावित होते हैं या उसे महसूस कर पा रहे होते हैं। इसमें समुदाय के भीतर से ही या कभी–कभी बाहर के व्यक्ति भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। किसी समस्या या विषय पर पहल करने की इस सांगठनिक प्रक्रिया में स्थानीय लोग ही कोई न कोई भूमिका लेते हैं।

यह याद रखना होगा कि समुदाय के संगठन की प्रक्रिया बहुत आसान प्रक्रिया नहीं होती है। यह बहुत जतन, मनोबल, प्रेरणा और साहस से भरा–पूरा काम होता है। सामुदायिक संगठन पहले समुदाय और फिर समाज में सत्ता संबंधों को बदलने की पृष्ठभूमि तैयार करते हैं। जहाँ भेदभाव और गैर–बराबरी न हो। शोषण को खत्म किया जा सके। इसलिए जरूरी है कि हम सामुदायिक संगठनों का सम्मान करें। इसी से समाज में नया और रचनात्मक नेतृत्व पैदा होता है। सकारात्मक बदलाव आता है।

9.1.10 : सामुदायिक संगठन के रूप

यह समुदाय तय करता है कि उनके संगठन का स्वरूप कैसा होगा। समस्या या विषय के मुताबिक संगठन का दायरा और गंभीरता तय होती है। यदि किसी समस्या से बहुत सारे गांव प्रभावित हैं, जिनमें से सभी की या ज्यादातर की यह सोच है कि वे सांगठनिक प्रक्रिया से जुड़ें, तब संगठन का स्वरूप बहुत विस्तार लिए हुए होगा।

सरल सन्दर्भों में संगठन के कुछ रूप ये हो सकते हैं –

1. भौगोलिकता के आधार पर शहरी, ग्रामीण, मिश्रित या आदिवासी संगठन;
2. क्षेत्र के आधार पर संस्थागत या गैर–संस्थागत और संगठित या असंगठित क्षेत्र;
3. मकसद के आधार पर हकों को हासिल करने के लिए, स्वराज्य की नीति के मुताबिक आत्मनिर्भरता की नीति पाने के लिए/खुद के विकास की योजना बनाने के लिए या व्यापक सामाजिक बदलाव के लिए;

सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया को एक योजना या प्रोजेक्ट नहीं माना जाना चाहिए। यह प्रक्रिया समस्या/विषय से गहरे जुड़ाव और संघर्ष के लिए मनोबल से जुड़ी होती है।

9.1.11 : सामुदायिक संगठन का दायरा

एक संगठन का दायरा एक बस्ती से लेकर वैश्विक हो सकता है। स्थानीय मुद्दे से लेकर कृषि के संकट और पर्यावरण के संकट पर समुदाय स्थानीय स्तर पर भी संगठित हो रहे हैं और दुनिया के स्तर पर भी। वास्तव में यह तय होता है समस्या के दायरे, उस समस्या के स्वरूप और फैलाव से। दुनिया में जिस तरह से तापमान बढ़ रहा है, उस मुद्दे पर एक सीमित दायरे में काम नहीं किया जा सकता है। इसके लिए वैश्विक स्तर की पहल जरूरी है ताकि विकास की उन नीतियों में बदलाव हो, जिनके कारण यह संकट खड़ा हो रहा है।

वास्तव में सामुदायिक संगठनों के दायरे को दो रूपों में पहचाना जा सकता है –

1. **भौगोलिक दायरा** – एक बस्ती या गांव या खास शहर से लेकर राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सामुदायिक संगठन।

2. **विषय/समस्या/मुद्दे का दायरा** – कुछ मुद्दे स्थानीय होते हैं और कुछ बहुत व्यापक होते हैं। हमें यह समझना होगा कि अपने मुद्दे की जड़ें कहाँ हैं? हर समस्या की जड़ में व्यवस्थागत कारण होते हैं। हम किसी भी स्तर की समस्या के लिए संगठित हों; उनसे जुड़ी नीतियों और कानूनों का अध्ययन जरूर करना चाहिए।

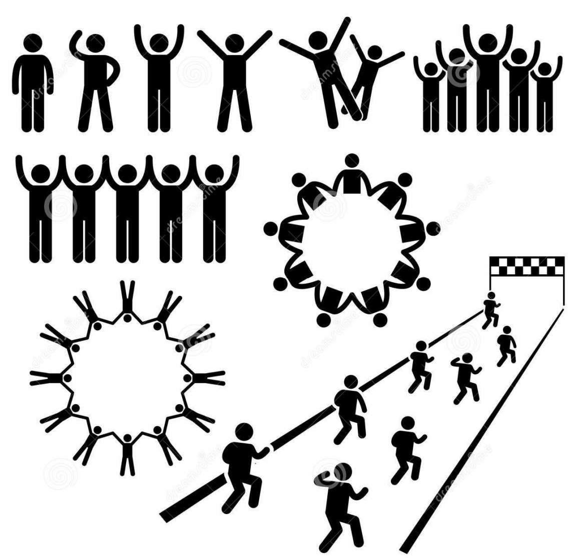

केस अध्ययन

- विषय या मुद्दा कुछ भी हो, उसका अपना महत्व होता है। हम देश में देखते हैं कि एक मामला व्यवस्था में बदलाव का कारण बन सकता है। जैसे कार्यस्थल पर लैंगिक उत्पीडन को रोकने के लिए आज हमारे पास एक क़ानून है, किन्तु वर्ष 1997 के पहले हमारे पास कोई नियम या दिशा–निर्देश नहीं थे।

चित्र 9.1. भँवरी देवी

- हमें जानना चाहिए कि वर्ष 1992 में राजस्थान में एक महिला बाल विवाह रोकने के लिए कोशिशें कर रही थी; किन्तु समाज के संपन्न और उच्च तबकों को यह नहीं भाया और लोगों के समूह उन्होंने उस महिला, जिसका नाम भंवरी देवी है, के साथ सामूहिक बलात्कार किया। सबसे पहले भँवरी देवी को इस अत्याचार के खिलाफ मामला दर्ज नहीं करने दिया गया। उन्होंने संघर्ष किया। प्रकरण दर्ज हुआ किन्तु अपने प्रभाव का उपयोग करके अपराधी छूट गए। उनके संघर्ष से प्रेरित होकर महिला समूह संगठित हुए। उस संगठन का नाम बना – विशाखा।

- उस समूह ने भारत में महिलाओं के शोषण से मुक्ति, समाज में बराबरी और सम्मानजनक जीवन के अधिकार को लागू करने की व्यवस्था देने के लिए उच्चतम न्यायालय में जनहित याचिका दायर की।

- इस मामले में अगस्त 1997 में उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति जे.एस. वर्मा, न्यायमूर्ति सुजाता मनोहर और न्यायमूर्ति बी. एन.किरपाल की खंडपीठ ने महिलाओं के लैगिक उत्पीडन को रोकने के लिए व्यवस्था बनाने के मकसद से महत्वपूर्ण दिशा–निर्देश जारी किये; जिसे विशाखा दिशा–निर्देश कहा जाता है।

हमने जाना

- मानव समूहों का वर्तमान स्वरूप विकास की एक लम्बी प्रक्रिया का परिणाम है। प्रारम्भिक स्वरूप में मानव छोटे–छोटे समूह में रहकर शिकार करता और जीवन–यापन करता था। स्त्री–पुरुषों की स्थिति समान थी। सभी शिकार में हिस्सा लेते और बांटकर खाते थे।
- विकास के पहले चरण के रूप में मानव ने अपने काम को आसान करने के लिए औजारों को बनाया। कालान्तर में श्रम का विभाजन और स्त्री–पुरुष संबंधों में बदलाव आया।
- विकास का दूसरा चरण खेती और पशु पालन का था। जहां से संपत्ति, शक्ति, अधिकार की अवधारणाओं का जन्म हुआ। बाद में व्यवस्था हेतु परिवार समुदाय और राज्य व्यवस्था अस्तित्व में आयी।
- मानव समाज में जब कुछ लोग समान्य हितों के लिये एकत्रित होकर क्रियाशील होते हैं तो समुदाय अस्तित्व में आते हैं। समुदाय को सामूहिक विरासत या परम्परा अथवा समूह में एकरूपता के कारण सामूहिकता की भावना से जुड़े मानव समूहों में भी परिभाषित किया जाता है।
- किसी समाज में प्रकृति, भौगोलिकता, पहचान, खास लक्ष्य और वैश्विक हितों के आधार पर अनेक प्रकार के समुदाय हो सकते हैं।
- जब एक या अधिक समुदाय मिलकर किसी समस्या को हल करने या किसी स्थिति को बदलने के लिए मिलकर पहल करते हैं। तो इसे सामुदायिक संगठन कहते हैं।

कठिन शब्दों के अर्थ

- **आदिम मानव समाज** : मानव समाज का वह रूप जिसमें वह सृष्टि के प्रारम्भ में रहता और व्यावहार करता था।
- **श्रम विभाजन** : किसी विशिष्ट कार्य करने के लिये किसी विशेष समुदय समूह व्यक्तियों को चिन्हित करना या दूसरे शब्दों में श्रम की प्रकृति के आधार पर कुछ विशिष्ट लोगों को विशिष्ट दायित्व सौंपना।
- **समुदाय :** रूचियों और सामाजिक व्यवहार में एकरूपता रखने वाले लोगों के समूह को समुदाय कहा जाता है।
- **सामुदायिक संगठन :** किसी लक्ष्य को हासिल करना या समस्या के समाधान के लिये एक–जुट पहल करने का कार्य करने वाला समुदाय सामुदायिक संगठन कहलाता है।
- **प्राकृतिक संसाधन** : ऐसे संसाधन जो हमें प्रकृति द्वारा जीवन–यापन के लिये प्राप्त हुए हैं। दूसरे शब्दों में प्रकृति द्वारा प्रदत्त संसाधन जिनके निर्माण में मानव की कोई प्रत्यक्ष भूमिका नहीं है। प्राकृतिक संसाधन कहलाते हैं।

अभ्यास के प्रश्न

- मानव का उद्‌भव और विकास कैसे हुआ?
- मानव के विकास की प्रक्रिया में मानव समुदाय के रूप में कैसे आया?
- समुदाय की परिभाषा, स्वरुप, प्रकार क्या हैं?
- सामुदायिक संगठन का मतलब क्या है?
- सामुदायिक संगठन का निर्माण किन–किन मकसदों से होता है?
- सामुदायिक संगठन का चरित्र और दायरा क्या होता है?

आओ करके देखें

- कल्पना कीजिए कि मानव समाज का निर्माण कैसे हुआ होगा? क्या मानव एक सामाजिक प्राणी अपने आप बन गया होगा या कोई परिस्थितियां बनी होंगी, जिन्होंने इस समाज को यह रूप दिया? आप अपने समाज को किस नज़रिए से देखते हैं? क्या आपको महसूस होता है कि हमेशा से मानव समाज इसी रूप में रहा था, जिस रूप में आज है? मन में आ रही बातों को आप अपनी कापी में लिख लें।
- अपने आस–पास के परिवेश को देखकर समझें कि समाज और समुदाय का मतलब क्या हो सकता है? इनमें क्या अंतर होता है? ये किस रूप में है अपनी पड़ताल को तथ्यों के आधार पर कॉपी में दर्ज कर लें।
- क्या आपके आस–पास कोई प्रभावी सामुदायिक संगठन कार्यरत हैं यदि हैं तो वे किस क्षेत्र में कार्य कर रहे हैं? एक समुदाय के रूप में उनकी उपलब्धियों और कमियों की समीक्षा कीजिए।

अधिक जानकारी के लिए संदर्भ सूत्र

प्रस्तुत इकाई मानव समाज के उद्‌भव और विकास से संबंधित है। जिसमें समुदाय और सामुदायिक संगठनों को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। यह समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, समाजकार्य, प्रबन्धन इत्यादि अनेक सामाजिक विज्ञानों की विषय–वस्तु हैं। अतः विस्तार से जानकारी के लिये इन विषयों की संबंधित पुस्तकों से अध्ययन किया जा सकता है। कुछ संदर्भ सूत्र निम्नवत हैं–

- **मानव समाज संगठन एवम् विघटन के मूल तत्व** — डा. डी.के.सिंह, डा. सौरभ पालीवाल, डा. रोहित मिश्र, न्यू रायल बुक कंपनी, लखनऊ
- **समाजशास्त्र की मूलभूत अवधारणायें** — डा. अरूण कुमार सिंह, न्यू रायल बुक कंपनी, लखनऊ

- **व्यक्ति और समाज** — प्रोफेसर पीडी मिश्र, डॉ (श्रीमती) बीना मिश्रा, न्यू रायल बुक कंपनी, लखनऊ
- **हिंद स्वराज** — महात्मा गांधी
- **एक आत्मकथा या सत्य के साथ मेरे प्रयोग** — महात्मा गांधी
- **भारत की खोज** — पंडित जवाहरलाल नेहरु
- **भारतीय समाज** — श्यामाचरण दुबे
- **मानव और संस्कृति** — श्यामाचरण दुबे
- **परंपरा इतिहास बोध और संस्कृति** — श्यामाचरण दुबे
- **शिक्षा समाज और भविष्य में संक्रमण की पीड़ा** — श्यामाचरण दुबे

- आकाशवाणी द्वारा विज्ञान धारावाहिक मानव का विकास तैयार कराकर प्रसारित किया गया। इसमें मानव के उदभव और विकास को फीचर शैली में रोचक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। आकाशवाणी के कई केन्द्र इसका प्रसारण करते हैं। जिसे सुना जा सकता है। साथ ही इसे प्रसार भारती संग्रहालय (आर्काइव) से प्राप्त किया जा सकता है।
- दूरदर्शन द्वारा पंडित जवाहरलाल नेहरू की पुस्तक भारत एक खोज पर आधारित सुप्रसिद्ध फिल्मकार श्याम बेनेगल द्वारा निर्देशित धारावाहिक की प्रारम्भिक कड़ियों में तार्किक रूप से प्रदर्शित किया गया है। इस धारावाहिक की डी.वी.डी. बाजार में उपलब्ध है।

■■■

9.2 : सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया और सिद्धांत

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप जान सकेंगे कि–

- सामुदायिक संगठन बनने की प्रक्रिया क्या होती/हो सकती है?
- सामुदायिक संगठन के मूल्य और सिद्धांत क्या होते हैं?
- समुदाय को संगठित करने वाले संगठक कौन होते हैं उनके प्रमुख गुण क्या होते हैं?
- सामुदायिक संगठक के कार्य और भूमिकाएं क्या–क्या होती हैं?

9.2.1 : सामुदायिक संगठन

समुदाय किसी मुद्दे या समस्या पर अचानक ही संगठित नहीं होता है। अध्ययन यह बताते हैं कि जब समस्या/मुद्दा गंभीर हो जाता है, तभी समुदाय संघर्ष की राह पर उतरता है। जब समुदाय में किसी व्यक्ति या कुछ व्यक्तियों को यह अहसास होता है कि किसी मुद्दे/व्यवहार या समस्या पर समाज में बदलाव की जरूरत है, तब एक प्रक्रिया शुरू होती है। संगठन का निर्माण एक मकसद के लिए होता है।

जो लोग संघर्ष कर रहे हैं, हमें वास्तव में उनका सम्मान करना चाहिए क्योंकि उन्होंने अपने जीवन की प्राथमिकताओं को छोड़ कर, बदलाव और समस्या के समाधान के लिए खुद को सामने रखा। वे बेहद निजी हितों या फायदों के लिए एकजुट नहीं होते हैं। वे एकजुट होते हैं – समुदाय के हितों के लिए। वे समुदाय की बेहतरी में ही अपने हित देखते हैं।

चित्र 9.2.0: संगठन

एक व्यक्तिगत समस्या होती है, तो वे उससे खुद अपने स्तर पर जूझते रहते हैं, पर जब समुदाय को लगता है कि स्थिति को बदलना है तो समुदाय के हर एक व्यक्ति, हर एक परिवार को सोचना पड़ता है कि वे क्या करें? क्या वे बदलाव की प्रक्रिया का हिस्सा बनें? इसके लिए उन्हें अपने परिवार की जरूरतों को किनारे रखना होता है ताकि वे लंबे समय तक संगठन के साथ जुड़े रह सकें। संगठन व्यक्तिगत हित के बजाय सामूहिक हित की नींव पर खड़े होते हैं। संगठन का हिस्सा बनने का मतलब होता है बदलाव का हिस्सा बनना।

वास्तव में सामुदायिक संगठन का आकार लेना कोई बहुत आसान प्रक्रिया नहीं होती है। इसमें व्यक्तिगत स्तर से लेकर परिवार और समुदाय के स्तर तक बहुत सोच–विचार और तर्क–वितर्क होता है। संगठन रातों–रात नहीं बनता है। इसकी एक प्रक्रिया होती है। यह बता पाना बहुत मुश्किल है कि सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया क्या होती है?

सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया मानवीय ऊर्जा और प्रतिबद्धता से शुरू होने वाली प्रक्रिया है। इसके कोई किताबी सिद्धांत नहीं हैं। यह तो समुदाय खुद तय करता है कि उनका संगठन कैसा होगा? कितनी यात्रा तय करेगा?

हम केवल अब तक के अनुभवों के आधार पर ही सामुदायिक संगठनों की प्रक्रिया और मूल्यों–सिद्धांतों को समझ सकते हैं।

9.2.2 : सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया

समस्या का स्वरूप जानना

- समुदाय किसी समस्या का सामना कर रहा है और स्थिति में बदलाव की जरूरत है। ऐसे में जरूरी है कि समुदाय उस समस्या के स्वरूप का आंकलन करें।
- यह सवाल पूछना कि हम सामुदायिक संगठन क्यों चाहते हैं?
- यह आंकलन समुदाय के लोगों को मिलकर करना होगा ताकि उसके विभिन्न पहलुओं (राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और व्यवस्थागत) को समझा जा सके।

चित्र 9.2.1 : सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया

समुदाय की तैयारी को जांचना

- यह देखिये कि क्या समुदाय ठीक ढंग से और आत्मविश्वास के साथ विषय/समस्या को अभिव्यक्त कर पा रहा है?
- वहां कौन से ऐसे लोग/समूह या कारक हैं, जो समुदाय के आत्मविश्वास को प्रभावित करते हैं?
- क्या समुदाय को संभावित चुनौतियों का पता है? क्या उन चुनौतियों से निपटने के लिए तैयार हैं?
- यह जानना कि क्या समुदाय संगठित होकर स्थिति को बदलने के लिए तत्पर है? यदि नहीं तो क्यों? क्या उन पर कोई दबाव है या अन्य समस्याओं के कारण वे आगे नहीं आना चाहते हैं?
- यह भी देखना कि ऐसे कौन से लोग/समूह हैं जो सांगठनिक पहल से सहमत नहीं है / उसका विरोध कर रहे हैं/सुनिश्चित नहीं हैं कि साथ जाएँ या नहीं?

समुदाय के भीतर ताकत और प्रभाव के समीकरण को समझना

- यह अध्ययन करना होगा कि हमारे समुदाय और व्यापक समाज में वे कौन लोग या समूह हैं जो ताकतवर और प्रभावशाली हैं। यह समझना जरूरी है कि वे किसकी तरफ हैं? (यहाँ अध्ययन का मतलब कोई तकनीकी या किताबी अध्ययन नहीं है। बस अलग–अलग पहलुओं को जानना और उस पर बात करके स्पष्टता लाना)।

- यह अध्ययन करना जरूरी है कि जिस समस्या या मुद्दे पर काम कर रहे हैं; उससे किनके हित प्रभावित होने वाले हैं? यदि हम कर्जदारी पर काम कर रहे हैं, तो क्या क़र्ज़ देने वाले शांत बैठेंगे? यदि हम शराब बंदी की मांग कर रहे हैं, तो क्या शराब से लाभ कमाने वाले शांत रहेंगे?

- हम कुछ भी कहें पर यह सच है कि जाति व्यवस्था के चलते हर समुदाय और हर सामुदायिक संगठन प्रभावित होता है। हमें यह तय करना होगा कि हम जाति और लैंगिक भेद–भाव को परे रख पायेंगे या नहीं?

सामुदायिक संगठन का निर्माण

- अब जब हम यह जानते हैं कि समुदाय खुद समस्या के निराकरण के लिए संगठित होकर आगे बढ़ने के लिए तैयार है, तब संगठन के स्वरूप, उसकी जरूरत, ढाँचे, सिद्धांतों और संभावित चुनौतियों के बारे में खुली चर्चा के लिए तैयारी करना चाहिए?

- समस्या के कारणों और उसका समाधान क्या है; इस सवाल पर चर्चा–बहस होना चाहिए। इस चर्चा से उभर कर आये बिंदुओं को लिख लेना चाहिए।

- यह स्पष्ट होना जरूरी है कि हमारी यानी संगठन के लोगों की व्यक्तिगत और सामूहिक क्षमताएं और कमजोरियां क्या हैं?

- संगठन में किसकी क्या भूमिका है, यह मिल–जुल कर तय कर लेना चाहिए? हो सकता है कि कोई सदस्य समुदाय या सरकार के सामने समस्या को अच्छे से रख पाए, कोई सदस्य अच्छी लिखा–पढ़ी कर सकता होगा, किसी में दूसरे संगठनों के साथ संवाद करने की क्षमता होगी और किसी में समन्वय करने का कौशल भी होगा। संगठन में इस तरह अपनी ताकतों और क्षमताओं का आंकलन कर लिया जाना चाहिए।

- जो भी चर्चा हो और जो भी निर्णय हों, उनसे सभी सदस्यों को अवगत करा दिया जाना चाहिए। ऐसा नहीं होना चाहिए कि कोई एक व्यक्ति या कुछ व्यक्ति मिलकर निर्णय लेना शुरू कर दें।

- अब जरूरी है कि संगठन के लक्ष्य, सिद्धांत, काम करने के तरीके और नियम तय कर लिए जाएँ। इस प्रक्रिया में संगठन के भीतर सघन प्रक्रिया चलना चाहिए और सबको प्रस्तावित बिंदुओं के बारे में पूरी जानकारी होना चाहिए।

- संगठन के लक्ष्य, नियमों और सिद्धांतों को लिख कर अपने केंद्र या दफ्तर (वह स्थान जहाँ सब लोग आ–जा सकें, मिल–बैठ सकें।) में चस्पा कर देना चाहिए। जो पढ़ न सकें, उन्हें पढ़ कर सुनाना चाहिए।
- संगठन के स्तर पर अपनी ताकत, कमजोरियों, अवसरों/संभावनाओं और खतरों पर चर्चा, बहस करना और उनकी पहचान करना। इस विश्लेषण को अंग्रेजी में SWOT विश्लेषण कहते हैं। (S=Strengths, W= Weaknesses, O=Opportunities, T= Threats)
- अपनी समस्या/मुद्दे के समाधान के अंतर्गत वैकल्पिक हल के बारे में सोचना और उसे सामने रखना।
- अपनी कार्य–योजना बनाना, उसे लागू करने के तरीकों के बारे में स्पष्ट रूपरेखा बनाना।

संगठन की निरंतर प्रक्रिया

- संगठन की बुनियादी तैयारियां हो जाने के बाद मुख्य विषय से संबंधित विभिन्न समस्याओं को समझना और उन्हें लिख लेना।
- किन पहलुओं/मुद्दों पर पहले काम करना है, उनकी प्राथमिकता तय करना।
- यह जानना कि हमारे संगठन के अलावा भी ऐसे कौन लोग/समूह/संस्थाएं हैं, जो हमारी समस्या को हल करने में सहयोगी हो सकते हैं?
- अपनी ताकत, कमजोरियों, अवसरों/संभावनाओं और खतरों को ध्यान में रखते हुए सोचना कि हम अपनी कमजोरियों में कमी कैसे लायेंगे?
- अपने लक्ष्यों को फिर से परिभाषित करना – कौन सा लक्ष्य तत्काल होगा और कौन सा लंबे समय में;
- संगठन की कार्ययोजना के मुताबिक काम करना।
- समुदाय के बीच संवाद में निरंतरता बनाये रखना। हमें यह तय करना होगा कि एक बार काम शुरू हो जाने के बाद कहीं व्यापक समुदाय संगठन के काम से जाने–अनजाने में बाहर न हो जाए।
- अपनी क्षमताओं और कौशल को बढ़ाने के लिए लगातार कोशिश करते रहना।
- स्थिति को जांचने के लिए अध्ययन करते रहना।
- बराबरी का व्यवहार करना और पारदर्शिता बनाये रखना।

संगठन में समीक्षा और मूल्यांकन

- एक निश्चित समयावधि में अपने लक्ष्य और मूल्यों के मुताबिक अपने काम की समीक्षा करते रहना जरूरी होता है। यह जांचना जरूरी है कि हम अपनी यात्रा में कितना आगे पहुँचे हैं।
- समीक्षा में हमें यह भी देखना होगा कि हम किन पहलुओं और पक्षों पर मज़बूत हैं और कहाँ कमज़ोर हैं; इसके मुताबिक अगले चरणों की तैयारी करना।
- यह देखना कि किन पहलुओं पर प्रशिक्षण और क्षमता वृद्धि की जरूरत है?
- यह जांचना कि क्या हम खतरों और कमजोरियों को सही रूप में पहचान पाए?
- क्या हम अपने सिद्धांतों के मुताबिक काम कर पा रहे हैं?
- जरूरत पड़ने पर अपने काम करने के तौर तरीकों में बदलाव करना।
- यह जांचना कि क्या हमारा उत्साह और मनोबल बना हुआ है? यदि नहीं तो यह क्यों कम हो रहा है?

9.2.3 : सामुदायिक संगठन के सिद्धांत और मूल्य

सामुदायिक संगठन भी व्यक्तियों का ही एक समूह होता है। वह एक सही दिशा में आगे बढ़े, इसके लिए कुछ सिद्धांत तय करना जरूरी होते हैं। यहां हम ऐसे ही कुछ जरूरी सिद्धान्तों का उल्लेख कर रहे हैं–

1. **सार्वजनिक–सामूहिक हित सर्वोपरि** – यह स्पष्ट होना जरूरी है कि सामुदायिक संगठन के लिए किसी एक व्यक्ति या कुछ व्यक्तियों के हित महत्वपूर्ण होंगे या समुदाय के हित।
2. **स्पष्टता** – मुद्दा या समस्या क्या है और हम उसे किन तरीकों से बदलना चाहते हैं; यह स्पष्ट होना बहुत जरूरी है।
3. **भेदभाव न होना** – सामुदायिक संगठन का मकसद होता है बदलाव। यदि वह बदलाव किसी भेदभाव पर आधारित होगा तो समाज को उससे लाभ न होगा। जाति, लिंग, आर्थिक स्थिति, आजीविका के प्रकार, उम्र, विकलांगता या किसी भी अन्य आधार पर भेदभाव/बहिष्कार न होना। यह सुनिश्चित करना जरूरी होगा कि स्थानीय समुदाय में वंचित तबकों/परिवारों की पहचान की जाए, और उन्हें नेतृत्व में समान अवसर उपलब्ध हों।
4. **सहभागिता** – समस्या के विश्लेषण से लेकर रणनीति तय करने और समीक्षा करने की प्रक्रिया समेत हर स्तर पर सभी/ज्यादातर लोगों की सहभागिता सुनिश्चित करना जरूरी होगा। अन्यथा सामुदायिक संगठन में नेतृत्व केंद्रीयकृत होता जाएगा। जिससे संगठन का प्रभाव कम हो सकता है।

5. **समान लक्ष्य** – जो लोग या समूह संगठन में शामिल हैं, उनके लक्ष्य एक समान होना चाहिए।

6. **पारदर्शिता और जवाबदेही**– संगठन के संचालन के लिए जरूरी आर्थिक संसाधन जुटाए जायेंगे। हमें कहाँ से कितने संसाधन मिले और उनका उपयोग कहाँ और किसने किया; ये सभी जानकारियां संगठन के सभी सदस्यों और समुदाय को सर्व–सुलभ होना चाहिए। इसके साथ ही संगठन के निर्णय कब और किस पद्धति से लिए गए, यह प्रक्रिया भी पारदर्शी होना चाहिए।

7. **अहिंसा का सिद्धांत** – सामुदायिक संगठन की कार्यशैली अहिंसक होगी और वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से किसी भी तरह की हिंसा में शामिल न होगा।

8. **लोकतांत्रिक पद्धति** – संगठन की कार्यशैली लोकतांत्रिक होगी, जिसमें सभी को अपनी बात कहने और निर्णय की प्रक्रिया में समान अवसर उपलब्ध होंगे।

9. **समालोचना के लिए तैयार रहना** – यह संभव है कि किन्ही कारणों से समुदाय, समुदाय के संगठन, उसके किसी सदस्य या किसी काम की आलोचना हो। हमें उस पर विचार करना चाहिए और पता लगाना चाहिए कि ऐसा क्यों हो रहा है? क्या इसमें कोई सच्चाई है? यदि हाँ, तो हम सुधार कैसे कर सकते हैं। और यदि सच्चाई नहीं है तो उस आलोचना में किसके क्या हित निहित हैं?

10. **एकजुटता की भावना** – सामुदायिक संगठन के सदस्य एक लक्ष्य के प्रति प्रतिबद्ध होते हैं और मानते हैं कि उस लक्ष्य को हासिल करना उन सबकी संयुक्त जिम्मेदारी है। वे तय करते हैं कि जो भी परिस्थितियां बनें, वे एक–दूसरे के साथ रहेंगे और एक–दूसरे की ताकत बनेंगे।

9.2.4 समुदाय संगठक (नेता) : एक व्यक्तित्व को परिभाषित करने की कोशिश

वास्तव में समुदाय संगठक (नेता) कोई पद नहीं है। प्रथम वर्ष के मॉड्यूल नेतृत्व विकास में हमने इस बारे में विस्तार से अध्ययन किया है। यहाँ हम समुदाय संगठक को मुख्य रूप से एक संगठनकर्ता के रूप में जनभागीदारी सुनिश्चित करने वाले व्यक्तित्व के रूप में समझने की कोशिश करते हैं। यह एक प्रतिबद्ध भूमिका है। जिसमें जरूरत और परिस्थिति के मुताबिक एक या एक से ज्यादा व्यक्ति समुदाय को एक मंच पर एक सोच के साथ एकजुट करने की कोशिश करते हैं। अब जरा इस सवाल का जवाब खोजिये कि हमारा समुदाय क्या एक समान सोच और चरित्र का समुदाय है या इसमें शामिल लोगों/परिवारों/समूहों की सोच और नजरिया अलग–अलग है? बहुत जरूरी होता है समस्या के मुद्दे से प्रभावित समुदाय के चरित्र को जानना और समझना। इसके साथ ही अगले चरण में उन संभावनाओं को टटोलना कि समस्या को हल करने की प्रक्रिया क्या होगी?

सामुदायिक संगठक वास्तव में संगठन की प्रक्रिया को चलाने, उसकी जरूरतों को पहचान कर उसका प्रबंधन करने, समुदाय की ताकत को बढ़ाने का जतन करने वाला व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह होता है।

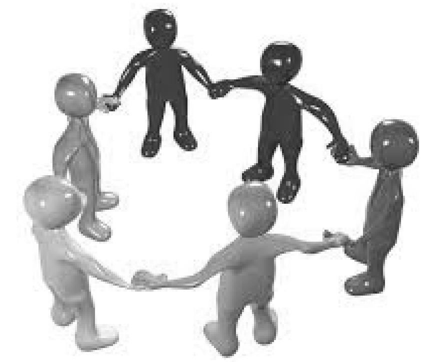

चित्र 9.2. : संगठन

हमें यह याद रखना होगा कि सामुदायिक संगठक में नेतृत्व के कई गुण होते हैं, किन्तु वह खुद संगठन का नेता या प्रमुख नहीं होता है। वह संगठन का नेतृत्व करने वाले व्यक्ति या समूह का एक प्रमुख सहायक होता है।

हमने पहले समुदाय और सामुदायिक संगठन के बारे में चर्चा की है। अब जब हम सामुदायिक संगठक के बारे में चर्चा कर रहे हैं तो हमें समुदाय और सामुदायिक संगठन वाले अध्याय को एक बार फिर से दोहरा लेना चाहिए कि समुदाय क्या है, उसका चरित्र क्या है और सामुदायिक संगठन क्या है और क्यों आकार लेता है? बस उसी से जुड़ी हुई कड़ी है– सामुदायिक संगठक की। जो उस संगठन को समस्या/मुद्दे की समझ, उसके विकल्प यानी समाधान, काम करने के तौर–तरीकों, निर्धारित सांगठनिक मूल्यों के साथ एक धागे में पिरो कर रखता है, वह सामुदायिक संगठक होता है।

उदाहरण के लिए हम सोचें कि गांव में या गांव के आस–पास अवैध खनन की समस्या है।

इसके बारे में कोई मानता था कि अधिकारी के पास जाने से समस्या हल हो जायेगी; तो कोई मानता था कि विधायक के पास समाधान होगा;

↓

किसी का विचार था कि ग्राम सभा और पंचायत के पास संवैधानिक ताकत है, तो हमें उसी के जरिये अपने क्षेत्र में अवैध खनन की समस्या को हल करना चाहिए;

↓

किसी का विचार था कि हमें अदालत के सामने अपनी समस्या ले जाना चाहिए; एक विचार यह भी आया है कि अरे छोडो; यह समस्या हल नहीं हो सकती है क्योंकि इसमें बहुत ताकतवर लोग शामिल हैं;

↓

एक बड़ा सवाल यह भी आया कि गांव के ऊँची जाति के लोग अन्य जाति के लोगों के साथ कैसे बैठेंगे।

केस अध्ययन

इन सबके बीच मेहरून नाम की महिला है, जो जानती है कि समुदाय के लोग इस समस्या से जूझ रहे हैं क्योंकि खनन के कारण जंगल खत्म हो रहा है, तालाब टूट गया है, भारी वाहनों की आवा–जाही से गांव का रास्ता टूट गया है। उसकी सोच है कि गांव के लोगों को मिलकर ही इस समस्या का हल खोजना होगा। संगठित पहल से ही उन ताकतों का मुकाबला किया जा सकता है।

उसके सामने सबसे पहले चुनौती होगी कि लोग इस विषय पर चर्चा करने के लिए तैयार हों। हो सकता है कि प्रभावशाली लोगों के खनन के काम में शामिल होने के कारण गांव के वंचित तबके संघर्ष की प्रक्रिया में जाने से हिचक रहे हों।

शुरुआत में शायद मेहरून को सबसे अलग–अलग बात करनी पड़ेगी ताकि लोगों के मन में चल रही बातों को जाना जा सके। लोग क्यों हिचक रहे हैं, उन कारणों को समझा जा सके।

समुदाय की स्थिति को जानने के बाद, जो लोग इस समस्या पर सक्रिय रूप से काम करने के लिए तैयार हैं, उन्हें इकठ्ठा करके बातचीत करना शुरू की जाती है। अभी बहुत कम लोग तैयार हुए हैं, पर जो तैयार हैं, वे खड़े हो रहे हैं।

मेहरून संवाद जारी रखती है। अब वह उन युवाओं को अपने साथ ले कर चलती है, जो वास्तव में समस्या को हल करके गांव की स्थिति में बदलाव लाना चाहते हैं। जब ऊर्जा इकठ्ठा होती है, तो उसके असर–उसकी गर्मी को आस–पास का समुदाय महसूस करने लगता है। संगठन एक रूप लेना शुरू कर देता है।

इसके बाद जो लोग ऐसी उलझन में थे कि संगठन से जुड़ें या नहीं, वे युवाओं की हलचल देखकर हिम्मत जुटाते हैं और संगठन से जुड़ना शुरू कर देते हैं।

पर दूसरी तरफ कुछ लोग हैं, जो समस्या का समाधान नहीं होने देना चाहते हैं क्योंकि अवैध खनन से उन्हें भी लाभ मिलता है। वे कुछ लोगों को समझाते हैं कि संगठन से न जुड़ें और कुछ लोगों को डराते हैं। कुछ को लालच दिया जाता है कि यदि वे संगठन के साथ नहीं जुडेंगे, तो उन्हें भी फायदा मिलेगा।

मेहरून न केवल समस्या के बारे में और खोजबीन करती है, बल्कि यह पड़ताल भी करती है कि कौन क्या कर रहा है? अपनी ताकत क्या है और कमजोरी क्या है? वह अवैध खनन से जुड़े नियमों और कानूनों के बारे में पढ़ती है और जानकार लोगों से बातचीत करती है। मेहरून समुदाय के बीच से एक संगठन को आकार देना शुरू कर चुकी है।

9.2.5 सामुदायिक संगठक (नेता) के कुछ गुण

सामुदायिक संगठक या नेता में क्या गुण होना चाहिए। इसे स्पष्ट रूप से परिभाषित कर पाना कठिन है। भिन्न–भिन्न संदर्भों, परिस्थितियों और समुदाय के आधार पर ही यह निर्भर करता है कि उसके संगठक के क्या गुण होंगे। उदाहरण के लिये आदिवासी समुदाय की अपनी संस्कृति, परम्पराएं और रहन–सहन होता है। उसका सम्मान किया जाना बुनियादी जरूरत है। इसका मतलब यह है कि आदिवासी समुदाय को जानने, महसूस करने और उसका सम्मान करने वाला व्यक्ति ही सही सामुदायिक संगठक होगा। हर समुदाय के अपने मूल्य और सिद्धांत होते हैं, उन्हें खारिज नहीं किया जाना चाहिए। हमें यह याद रखना चाहिए कि जहाँ जरूरत होगी, वहाँ खास व्यवहारों को बदला जाना होगा; किन्तु इसके लिए समुदाय की पहचान और उसकी सांस्कृतिक अस्मिता को खारिज नहीं किया जाना चाहिए। विविधता के इस दृष्टिकोण में भी सामान्य गुणों को रेखांकित किया जा सकता है। जो सामुदायिक संगठक के लिए जरूरी होंगे–

1. **जानने की इच्छा** – यह जरूरी है कि व्यक्ति हमारे मन को जगा देने वाले सवाल पूछ सके और बहस को अगले मुकाम पर ले जा सके। जब हम बदलाव की बात करते हैं, तो इसका मतलब है कि हम प्रचलित व्यवस्था को खत्म करने या उसे बदलने की पहल कर रहे हैं। जो कि समुदाय में आसानी से स्वीकार नहीं किया जाता है। कई शंकाएं खड़ी होंगी। उनका जवाब खोजना होगा। क्या समुदाय संगठक विषय, मुद्दे और अपने समुदाय पर या उनसे जुड़े सवाल खड़े करने और उनके उत्तर खोजने के लिए तैयार हैं?

2. **विपरीत स्थितियाँ (जैसे अपमानजनक या अनादर की स्थिति)** – जब सामुदायिक संगठक विषय, मुद्दे या समुदाय से जुड़े सवाल उठाता है, तब संगठन उन्हें आसानी से ग्रहण नहीं कर पाता है। ऐसे में हो सकता है कि सवाल उठाने वाले पर प्रति प्रश्न हों या उसकी मंशा पर ही सवाल उठा दिए जाएँ। जरूरी होगा कि उन स्वाभाविक प्रतिक्रियाओं को समझा जाए और अपनी बात स्पष्ट की जाए।

3. **कल्पनाशीलता** – हम समस्या के बारे में जानते हैं, पर एक बेहतर समाज का हमारा सपना क्या है? हम किस तरह का ताना–बाना चाहते हैं? उस बदले हुए समाज में महिलाओं और बच्चों की स्थिति क्या होगी? यह सोचने की क्षमता होना सामुदायिक नेता में आवश्यक है।

4. **आलोचना व्यंग्य और कटाक्षों को सहने की क्षमता** – जब कुछ करेंगे, तो आलोचना भी होगी। तैयार रहिये। अलग–अलग स्थितियों में अलग–अलग कारणों से सदस्य कटाक्ष कर सकते हैं। उन्हें सहें।

5. **व्यवस्थित ढंग से काम करने की प्रवृत्ति** – हम जो काम कर रहे हैं, वह बड़े बदलाव के लिए है। उस कोशिश के कई हिस्से हैं। कभी बड़े समूह की बैठकें हैं, तो कभी लिखा–पढ़ी का काम है तो कभी अदालत के मामले। ये सब करने के लिए व्यवस्थित कार्यशैली होना बहुत जरूरी है। अपने दस्तावेजों, लक्ष्य और सोच की

जानकारी, आंकड़ों और तारीखों के बारे में सब कुछ व्यवस्थित तो रखें ही, साथ ही कुछ हफ़्तों का सटीक और कुछ महीनों की व्यापक कार्ययोजना भी बना कर रखें।

6. **मन और मस्तिषक का खुला होना** – यदि मन और मस्तिष्क खुला होगा तो नयी बातें मिलेंगी, नया जानने को मिलेगा, नये लोगों से दोस्ती होगी और पहचान बढ़ेगी।

7. **दृष्टिकोण होना और सुनने की क्षमता** – विषय/मुद्दे को विभिन्न नज़रियों से देखना और उससे जुड़े हुए हर पक्ष को सुनने के लिए तैयारी। अपनी भूमिका में सबसे जरूरी है, उन लोगों को हमेशा सुना और समझा जाए जिनका मुद्दा है। आप एक व्यक्ति के रूप में ज्यादा जानकारी वाले हो सकते हैं, पर मुद्दे/समस्या से तो लोग ही जुड़े हैं। जिन्हें समस्या के बारे में पता है, उन्हें समाधान भी सबसे बेहतर पता हैं।

9.2.6 सामुदायिक संगठक (नेता) के कौशल

1. **महसूस कर पाना** – समाज में गैर–बराबरी, छुआछूत और सामाजिक बहिष्कार क्यों और किनके द्वारा होता है। यह समझ होना जरूरी है। लंबे समय से चली आ रही जातिवादी और लिंग भेद आधारित व्यवस्था से शायद समाज एक हद तक अभ्यस्त हो चुका है। इन स्थितियों को समझने से आगे उसकी पीड़ा को महसूस किये जाने की जरूरत है।

2. **दृष्टिकोण** – हर विषय के कई पहलू होते हैं। सामुदायिक संगठक को विषय के बारे में अपना दृष्टिकोण जरूर बनाना चाहिए। यह याद रखना होगा कि किसी भी विषय पर दृष्टिकोण काम के अनुभव, अध्ययन, चर्चाओं और बहस से बनता और पुख्ता होता है।

3. **समस्या की पहचान और विश्लेषण कर पाना** – एक बार जब हम अपने समाज के सामाजिक–आर्थिक ताने–बाने और उसके मूल चरित्र को जान लेते हैं, तब समस्या को उसके कारणों के साथ समझने के लिए तैयार होते हैं।

4. **पूर्वाग्रह से ग्रसित न होना** – यह संभावना बहुत अधिक है कि जब कोई व्यक्ति सामुदायिक संगठक की भूमिका में हो किन्तु उस समुदाय और समाज के ताने–बाने के बारे में उसका खुद का कोई अनुभव न हो, तब वह अपने पूर्वाग्रहों के आधार पर कार्यवाही शुरू करे। इस भूमिका में शामिल व्यक्ति को समस्या के विश्लेषण के निष्कर्ष आने तक एक सोच रखनी चाहिए, किन्तु पूर्वाग्रह से ग्रस्त नहीं होना चाहिए कि अनुसूचित जाति का व्यक्ति इस संघर्ष में नेतृत्व नहीं ले सकता है, या कोई व्यक्ति या समुदाय विशेष हमारे संगठन के खिलाफ ही खड़ा है आदि।

5. **समुदाय के बीच के रिश्तों के समीकरण/सत्ता संबंधों को समझना** – हम जानते हैं कि हमारे समाज में जाति, लिंग और आर्थिक सम्पन्नता के आधार पर नेता का चयन कर लिया जाता है। सामुदायिक संगठक की भूमिका है कि वह सामुदायिक संगठन में वंचित तबकों को नेतृत्व के हक से वंचित न होने दे। इस मामले में वह खुल कर किसी का समर्थन या विरोध नहीं कर सकता है; अतः उसे रणनीतिगत रूप से यह भूमिका निभाने में सक्षम होना चाहिए। इसका मतलब है कि उसे जाति, लैंगिक और आर्थिक ताकत के आधार पर रची–बसी सामाजिक व्यवस्था की समझ होना चाहिए।

6. **संवाद करने और संवाद का माहौल बनाने में सक्षम होना** – जैसे हमने पहले बात की है कि सामुदायिक संगठन का एक सिद्धांत होता है सबको बात कहने का अवसर और सहभागिता से निर्णय लिया जाना। इसके लिए समुदाय में एक सकारात्मक माहौल बनाने की जरूरत होती है ताकि चर्चा और बहस व्यक्तिगत आरोपों और प्रत्यारोपों की दिशा में न मुड़ जाए। हमें खुद को यह बार–बार याद दिलाते रहने होगा कि यह एक सामूहिक संघर्ष है और इस संघर्ष को टूटने–बिखरने से बचाने की जिम्मेदारी हम सबकी है।

7. **तर्क करने और बहस का संचालन करने की क्षमता** – सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया में कई मौकों पर छोटे–बड़े मुद्दों पर बहस शुरू हो सकती है। रणनीति और काम पर सवाल खड़े हो सकते हैं। तब संगठन में कुछ लोगों की भूमिका होगी कि वे बहस को सही दिशा में लेकर जाएँ। इसके लिए जरूरी है कि जिन मुद्दों या समस्या पर हम संघर्ष कर रहे हैं, उसके सभी पहलुओं पर हमारा अध्ययन और समझ हो। हमें यह भी पता हो कि इस विषय पर किन लोगों या समूहों के स्वार्थ या निजी हित शामिल हैं, ताकि वास्तविकता के आधार पर बहस हो सके।

8. **बहस को टकराव में परिवर्तित होने से रोकना** – समुदाय और सामुदायिक संगठन में दोनों तरह के लोग या उनके प्रतिनिधि हो सकते हैं, जो समस्या से प्रभावित हैं और वे भी जो समस्या का कारण है। ऐसे में कई मौकों पर संगठन में गलतफहमी पैदा करने और विवाद को खड़ा करने की सोची–समझी कोशिशें होती हैं। संगठकों में यह क्षमता होना चाहिए कि वे ऐसी स्थितियों, लोगों और हितों को समझ सकें और टकराव को नियंत्रित कर सकें।

9. **संयोजन/समन्वय कर पाना** – संगठन के सदस्यों को एकजुट रखते हुए बैठकें–संवाद का आयोजन कर पाना ताकि विषय से सम्बंधित मुद्दों/विषयों पर सहभागिता होती रहे और संवाद जारी रहे। संगठन के भीतर नयी जानकारी का प्रसार करना।

10. **दस्तावेजीकरण** – जो भी प्रक्रियाएं चल रही हैं, समस्या/मुद्दे से सम्बंधित विश्लेषण का नियमित रूप से **दस्तावेजीकरण** कर पाना।

11. **अन्य समूहों से जुड़ना** – सामुदायिक संगठन को अन्य समूहों/संस्थाओं/व्यक्तियों के सहयोग की जरूरत होती है, ताकि वह ठोस ढंग से अपने पक्ष को सामने रख सके। संगठन को **सशक्त** बनाने की प्रक्रिया में यह एक महत्वपूर्ण बात होती है कि हमारे साथ कौन से लोग और समूह खड़े हैं? ऐसे समूहों, जो हमारे विषय या विचार से जुड़े हैं, की पहचान करना और उनसे सम्बन्ध स्थापित कर पाना।

12. **विश्लेषण और समीक्षा** – सामुदायिक संगठन एक प्रक्रिया के रूप में काम करता है। इस प्रक्रिया में हमें समय–समय पर विषय की और अपने संगठन की समीक्षा करते रहने की जरूरत होती है। कई मर्तबा यह पहलू छूट जाता है या इसे तवज्जो नहीं दी जाती है। संगठक का ही कौशल इस महत्वपूर्ण काम को करने के लिए अवसर पैदा करता है।

13. **क्षमता बढ़ाते जाना** – हर विषय/मुद्दे के कई पहलू होते हैं। उनसे जुड़े नीति, नियम और क़ानून **होते** हैं। उन पर वैचारिक बहस होती है। जरूरी है कि सामुदायिक संगठक अपने विषय के बारे में खुद की क्षमता और समझ का स्तर बढ़ाता रहे। साथ ही समुदाय के सदस्य के लिए भी प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित करता रहे।

9.2.7 : सामुदायिक संगठक (नेता) की भूमिकाएं

सामुदायिक संगठक सामाजिक बदलाव की प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हमने यह पहले बात की है कि उसके कुछ गुण और क्षमताएं क्या होना चाहिए। उन गुणों और क्षमताओं का महत्व तभी महसूस किया जा सकता है, जब हम उसकी भूमिकाओं और कामों को पहचान सकेंगे। समुदाय, समुदाय के मुद्दों/समस्याओं, उनमें बदलाव की मंशा और तत्परता से ही संगठक की भूमिकाएं जुड़ी होती हैं।

1. **समुदाय और उसके भीतर के समीकरणों को समझना–उनका अध्ययन करना** – जब हम एक सामान्य व्यक्ति के रूप में समाज को देखते हैं, तब हम उसका आलोचनात्मक और वैज्ञानिक विश्लेषण नहीं करते हैं। तब हम उस समुदाय के हर रोज की घटनाओं में सामान्य हिस्सा होते हैं; किन्तु जब बदलाव या किसी मकसद से हम समुदाय में संगठक की भूमिका निभाते हैं, तब हमें समुदाय के भीतर के समीकरणों को को अच्छे से समझना जरूरी होता है। वहाँ की जातिगत व्यवस्था क्या है? महिलाओं की स्थिति क्या है? कौन प्रभावशाली है? कौन बदलाव की प्रक्रिया और संगठन के कामों में रुकावट पैदा करना चाहेगा? आदि। ये विषय समुदाय में खुली चर्चा या बहस का न होगा; किन्तु संगठक, नेतृत्व और प्रतिबद्ध कार्यकर्ताओं को इसके बारे में जानकारी होना चाहिए।

2. **वकालत करना** – यहाँ वकालत करने का मतलब न्यायपालिका वाली अदालत में वकालत करने से नहीं जुड़ा हुआ है। यहाँ वकालत का मतलब है अपने मुद्दों और समस्याओं के सन्दर्भ में मूल्यों के साथ बदलाव की वकालत करना। जो सही है, उसके पक्ष में खड़े होना।

3. **संवाद को बनाये रखना** – सामुदायिक संगठन का काम एक लंबी प्रक्रिया से जुड़ा होता है। यह कुछ दिनों का काम नहीं होता है। ऐसे में आशंका होती है कि संगठन के सदस्यों के बीच संवाद कम हो जाए या खतम हो जाए। संगठक का यह काम है कि वह व्यक्तिगत और सांगठनिक संवाद को बनाये रखे।

4. **क्षमताओं की पहचान करना और जिम्मेदारियां बांटना** – यह जरूरी नहीं है कि हर सदस्य कोई दस्तावेक लिख सके, उसी तरह हर व्यक्ति भाषण भी नहीं दे सकता है। किसी का कौशल नाटक करने या गीत गाने का हो सकता है। संगठक की एक भूमिका यह भी है कि वह अपने संगठन में अलग–अलग लोगों की क्षमताओं और विशेषताओं को पहचाने और उसके हिसाब से ही जिम्मेदारियां बांटे। जिम्मेदारियों का यह बंटवारा सामूहिक रूप से सबसे बातचीत करके होना चाहिए।

5. **नेतृत्व का सहायक** – संगठक खुद नेता नहीं होगा। संगठक को यह पता होना चाहिए कि संगठन का नेतृत्व समुदाय के ही किसी ऐसे वरिष्ठ सदस्य के हाथ में हो, जिसकी समुदाय में स्वीकार्यता और सम्मान है। इसका मतलब है कि संगठक का एक अहम काम नेतृत्व करने वाले व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के सहायक की अहम भूमिका निभाना है।

6. **नया विचार लाना** – नया विचार किसी मशीनी प्रक्रिया से नहीं आता है। जब हम अपने मुद्दों और समस्याओं पर विचार–चिंतन करते रहते हैं, तब कई विचार सामने आते हैं। यह एक ऐसी भूमिका है, जिसमें संगठन के भीतर विचार–चिंतन की प्रक्रिया चलाये रखने की कोशिश की जाती है, ताकि संगठन जड़ न हो जाए। उसमें निराशा न आ जाए।

चित्र : 9.2.1 सामुदायिक संगठक की भूमिका

7. **दूसरे संगठनों और समूहों से जुड़ना**– आमतौर पर संगठन में उर्जा बनाये रखने के लिए और अपने काम को मज़बूत करने के लिए अपने संगठन को दूसरे ऐसे समूहों या संगठनों या व्यक्तियों से जोड़ना जरूरी होता है, जो उसी तरह का काम कर रहे हैं और उसी तरह का विचार रखते हैं। ऐसे समूहों को खोजना और उनसे संवाद करने की प्राथमिक जिम्मेदारी भी संगठक को निभाना पड़ सकती है।

8. **प्रेरणा देने वाले काम करना** – जब बदलाव और समाधान की प्रक्रिया लंबी खिंचती है, तब संगठन और उसके सदस्यों को प्रेरणा देने में उसकी एक अहम भूमिका होती है।

9. **नया सीखने और प्रशिक्षण के लिए वातावरण तैयार करना** – संगठन और उसके सदस्य यदि कुछ नया जानते रहे और अपनी क्षमता बढाते रहें, तो उम्मीद और आशाएं मज़बूत होती हैं। संगठक उन विषयों की पहचान करता है, जिन पर प्रशिक्षण होना चाहिए।

10. **गतिविधियों का आयोजन** – इसमें सम्मलेन, संवाद, बैठकों की रूपरेखा बना कर उनका आयोजना करना शामिल है। यह हमें क्यों करना है और यह किस तरीके से आयोजित होगा; इसे आकार देने की भूमिका संगठक निभाता है।

11. **प्रक्रिया में सबको शामिल करना और जोड़े रखना** – सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया में कई बार यह आशंका होती है कि न बोलने वाले, गरीबी के कारण चुप रहने वाले या भाषा–शिक्षा के कारण कई लोग सांगठनिक प्रक्रिया से बाहर हो जाएँ। यह देखना होता है कि इस प्रक्रिया में से कोई बाहर न जाए या जाने–अनजाने में कोई बहिष्कृत न हो जाए।

हमने जाना

- समुदाय संगठन निर्माण की प्रक्रिया जटिल होती है। किसी पूर्व निर्धारित तयशुदा प्रक्रिया से संगठन का निर्माण करना कठिन है। परिस्थिति, समस्या की प्रकृति और समूह के स्वरूप के आधार पर संगठन की प्रक्रिया निर्भर करती है।

- सामुदायिक संगठन निर्माण की प्रक्रिया में समस्या के स्वरूप को पहचानना, समुदाय की तैयारी को जांचना, समुदाय के भीतर ताकत और प्रभाव के समीकरण को समझना, संगठन की निरन्तरता को बनाये रखना तथा समय–समय पर संगठन के कार्यों की समीक्षा और मूल्यांकन करना इत्यादि महत्वपूर्ण पड़ाव होते हैं। जिन पर ध्यान दिया जाना अत्यन्त आवश्यक होता है।

- सामुदायिक संगठन सही दिशा में आगे बढ़े इसके लिये कुछ सिद्धान्त और मूल्यों को तय करना आवश्यक होता है। यद्यपि प्रत्येक संगठन के लिये एक जैसे सिद्धान्त और मूल्य नहीं हो सकते किन्तु फिर भी कुछ ऐसे नियम सिद्धान्त और मूल्य होते हैं जो संगठन की कार्यप्रणाली को प्रभावी और पारदर्शी बनाते हैं। जिनमें से कुछ हैं सार्वजनिक हित की सर्वोच्चता, समस्या या मुद्दे की स्पष्टता, भेद–भाव रहित व्यवहार, सहभागिता, पारदर्शिता और जबावदेही, एकजुटता और समान लक्ष्य।

- समुदाय को किसी मुद्दे या समस्या पर इकट्ठा करने वाला व्यक्तित्व समुदाय संगठक या नेता कहलाता है। देश के प्रसिद्ध, प्रभावी और सफल जन आन्दोलनों में प्रारम्भिक रूप में एक संगठक की भूमिका स्पष्ट दिखती है। जिसे बाद में नेतृत्वकर्ता और प्रभावी स्वरूप प्रदान करता दिखाई पड़ता है। इस इकाई के प्रारम्भ में चिपको आन्दोलन के संदर्भ में चण्डी प्रसाद भट्ट को संगठक और सुन्दर लाल बहुगुणा को नेतृत्वकर्ता कहा जा सकता

है। पंचायतीराज और ग्रामीण विकास के मॉड्यूल में मेंढा (लेखा) प्रसंग में संगठक के रूप में मोहन हीराबाई हीरालाल को एवं नेतृत्वकर्ता के रूप में और सरपंच देवाजी तोफा की भूमिका को देखा जा सकता है।

- सामुदायिक संगठक (नेता) के कुछ प्रमुख गुणों के रूप में जानने की इच्छा, विपरीत परिस्थितियों में कार्य करने की क्षमता, कल्पनाशीलता, आलोचना और कटाक्ष सहने की क्षमता, व्यवस्थित ढंग से काम करने की प्रकृति इत्यादि प्रमुख हैं।

- सामुदायिक संगठक (नेता) को अपनी भूमिका प्रभावी ढंग से निभाने के लिए समुदाय और उसके भीतर के समीकरणों को पहचानने, पैरवी करने, संवाद बनाये रखने, जिम्मेदारियां बांटने, प्रेरणा देने, नया सीखने और प्रशिक्षण के लिये वातावरण तैयार करने, गतिविधियों का आयोजन करने, नेतृत्व की सहायता करने और नये विचारों को देने जैसे भूमिकाओं का निर्वाह करना होता है।

कठिन शब्दों के अर्थ

- सामुदायिक संगठक : किसी समुदाय में ऐसा व्यक्ति जो किसी समस्या या मुद्दे पर लोगों को तर्कों की सहायता से सहमत कर एक साथ लाता है और विश्वास जगाता है कि मिलजुल कर समस्या का समाधान खोजा जा सकता है।

- नेतृत्व सहायक : यह आवश्यक नहीं कि सामुदायिक संगठक स्वयं किसी मुद्दे या समस्या पर समुदाय का नेतृत्व करे अनेक अवसरों पर वह प्रारम्भिक संगठक के रूप में लोगों को एकजुट कर दूसरे किसी विशिष्ट या वरिष्ठ सदस्य को बागडोर सौंप सकता है।

अभ्यास के प्रश्न

- सामुदायिक संगठन के गठन की प्रक्रिया को स्पष्ट कीजिए।
- सामुदायिक संगठन के प्रमुख सिद्धान्तों और मूल्यों पर प्रकाश डालिये।
- किसी सामुदायिक संगठन के निर्माण और विकास में सामुदायिक संगठक (नेता) की भूमिका को स्पष्ट कीजिए।
- सामुदायिक संगठक (नेता) के प्रमुख गुणों को विस्तार से लिखिये।
- सामुदायिक संगठन में संगठक की भूमिका का समालोचनात्मक परीक्षण कीजिए।

आओ करके देखें

- यदि आपको सामुदायिक संगठन के काम की जिम्मेदारी सौंपी जाए तो आपको क्या–क्या काम करने होंगे, यानी आपकी जिम्मेदारियां क्या होंगी? उन जिम्मेदारियों को पूरा करने के लिए उनमें किस तरह का कौशल होना चाहिए? इन सवालों के जवाब आप अपनी कापी में जरूर लिख लें।

  यदि आप अपने आस–पास के क्षेत्र में लोगों को रोजगार के लिए संगठित कर रहे हैं तो चरणबद्ध ढंग से निम्नांकित उपाय कर सकते हैं–

- अपनी पंचायत में मनरेगा के क्रियान्वयन की स्थिति का पता लगाइये और इन प्रश्नो के उत्तर खोजिये–

  1. कितने लोगों को इसकी जरूरत है। 2. वास्तव में कितने काम किये गये। 3. कितने दिन में मजदूरी का भुगतान हुआ। 4. जिन्हें काम की जरूरत है, उन्हें मनरेगा के बारे में पता है। 5. क्या उन्हें पता है कि रोज़गार पाना उनका कानूनी अधिकार है। 6. क्या उन्हें पता है कि काम की मांग करने पर भी उन्हें काम नहीं मिलता है, तो उन्हें बेरोज़गारी भत्ता मिलना चाहिए।

- रोजगार के लिये उन्हें संगठित कीजिये और मनरेगा के प्रावधान का उपयोग करने की प्रक्रिया समझाइये। जैसे काम के लिए आवेदन देना, आवेदन की पावती लेना, काम न मिलने पर भत्ते के लिए आवेदन देना और सामाजिक अंकेक्षण की मांग करना।

- आपको यह ध्यान रखना होगा कि आप समुदाय को रोजगार के हक के लिए एकजुट कर रहे हैं और व्यवस्था के प्रति सजग बना रहे हैं. आपके अनुभव और इसकी प्रक्रिया निम्नांकित शीर्षकों के अन्तर्गत लिखिए–

  विषय या स्थिति क्या है? समस्या का संक्षिप्त विश्लेषण, समुदाय की प्रतिक्रिया क्या रही? क्या वे आसानी से चर्चा में शामिल हुए? वास्तव में आपने चर्चा कैसे की? जब लोग इस पर चर्चा कर रहे थे, तब किस किस तरह के विचार सामने आये? कौन सबसे ज्यादा मददगार रहा और क्यों? कौन इस प्रक्रिया को रोक रहा था और क्यों? कौन निष्क्रिय था और क्यों? ऐसे में आपने क्या किया? जब आपने मनरेगा की प्रक्रिया को आगे बढ़ाया, तब क्या हुआ? परिणाम और सीखें क्या रहीं?

अधिक जानकारी के लिए संदर्भ सूत्र

प्रस्तुत इकाई सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया और सिद्धान्त से संबंधित है। जिसमें समुदाय संगठक (नेता) के गुणों एवं भूमिका तथा महत्व पर भी प्रकाश डाला गया है। यह समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, समाजकार्य, प्रबन्धन इत्यादि अनेक सामाजिक विज्ञानों की विषय–वस्तु हैं। अतः विस्तार से जानकारी के लिये इन विषयों की संबंधित पुस्तकों से अध्ययन किया जा सकता है। कुछ संदर्भ सूत्र निम्नवत हैं–

- **मानव समाज संगठन एवम् विघटन के मूल तत्व** — डा. डी.के.सिंह, डा. सौरभ पालीवाल, डा. रोहित मिश्र, न्यू रायल बुक कंपनी, लखनऊ
- **समाजशास्त्र की मूलभूत अवधारणायें** — डा. अरूण कुमार सिंह, न्यू रायल बुक कंपनी, लखनऊ
- **व्यक्ति और समाज** — प्रोफेसर पीडी मिश्र, डॉ (श्रीमती) बीना मिश्रा, न्यू रायल बुक कंपनी, लखनऊ

■■■

9.3 : समुदाय में सत्ता शक्ति और ताकत

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप जान सकेंगे कि–

- समाज में सत्ता और शक्ति के मतलब को समझ सकेंगे। साथ ही समुदाय और समुदाय के संगठनों के भीतर सत्ता और ताकत के ढाँचे और स्वरुप को भी।
- वंचित तबकों के सशक्तिकरण के सन्दर्भ में सत्ता और ताकत के मायनों पर बुनियादी समझ बनाने में मदद मिलेगी।
- समुदाय में सत्ता और ताकत किन आधारों पर तय होती है– उसका चरित्र क्या होता है? समुदाय में सत्ता और शक्ति के प्रमुख प्रकार क्या हैं? इन बातों को गहराई से समझ सकेंगे।

9.3.1 समुदाय के ढाँचे में सत्ता शक्ति और ताकत

पहली इकाई में हमने मानव के उद्भव और विकास की प्रक्रिया के बारे में जाना था। इससे पता चलता है कि मानव समाज में संपत्ति, श्रम विभाजन, लैंगिक असमानता, जाति व्यवस्था, संग्रहण और फिर बाजार की व्यवस्थाओं का विकास कैसे हुआ। स्वाभाविक है कि इससे हमें यह पता चल जाता है कि समुदाय में किसी के पास बहुत ज्यादा ताकत, शक्ति और सत्ता का प्रभाव है और कुछ समूहों के पास ये ताकतें नहीं हैं। हमें बार–बार अपने समुदाय पर ध्यान केंद्रित करना होगा ताकि हम ताकत, शक्ति और सत्ता के चरित्र को पहचान सकें। यह देख सकें कि वहाँ कौन हैं, जो निर्णय को सबसे ज्यादा प्रभावित करते है या कर सकते हैं? वह ऐसा क्यों कर पाते हैं?

चित्र 9.4.1: समुदाय के ढांचे में सत्ता शक्ति और ताकत

9.3.2 सत्ता और ताकत की अवधारणा

जब कोई व्यक्ति, परिवार या समूह वह काम खुद कर सकता है या किसी से करवा सकता है, जिसमें उसकी अपनी मर्ज़ी हो। ऐसे में हम मानते हैं कि एक व्यक्ति, परिवार या समूह के दूसरे व्यक्ति, परिवार या समूह पर सत्ता है। इसमें कुछ कारक काम करते हैं क्योंकि यदि उसके पास सत्ता या ताकत नहीं होती तो वह उस काम को न तो खुद कर सकता था, न ही किसी से करवा सकता था।

जब समूह के सन्दर्भ में सत्ता की परिभाषा दी जाती है तब यह माना जाता है कि एक व्यक्ति या कुछ व्यक्तियों के छोटे से समूह की ताकत इतनी ज्यादा होती है कि वे बहुत बड़े समूह या समुदाय या संगठन के लिए निर्णय लेते हैं। वह समूह या संगठन उस निर्णय को मानने के लिए बाध्य होता है।

सत्ता और ताकत सापेक्ष भी होती है। उदाहरण के लिए हमारे समाज में सत्ता और ताकत की मौजूदगी परिवार के स्तर से ही शुरू हो जाती है। जरा सोचिये कि हमारे परिवार में सबसे ज्यादा प्रभाव किसका होता है? परिवार में निर्णय कौन लेता है?

- परिवार में यदि किसी के लिए कपड़े खरीदना है। खाना क्या पकना है। घर की सजावट कैसी होगी; जैसे मामलों में मुख्य निर्णय कौन लेता है?
- इसके बाद यदि परिवार के लिए नया घर लिया जाना है। नयी जमीन खरीदी जानी है। किसी सदस्य का आपरेशन करवाना है। कहीं बड़ा निवेश किया जाना है; जैसे मामलों में मुख्य निर्णय कौन लेता है?
- एक बार यदि निर्णय ले भी लिया गया तो क्या परिवार में ऐसा कोई है, जो उस निर्णय को अकेले पलट सकता है?

हम पाते हैं कि हमारी सामाजिक व्यवस्था में बड़े और महत्वपूर्ण निर्णय लेने का काम पुरुष करते रहे हैं। इसी कारण से इस व्यवस्था को पितृ–सत्तात्मक व्यवस्था माना जाता है। **(लैंगिक कारक)**

यदि वह परिवार अनुसूचित जाति का परिवार है और उस परिवार के पुरुष सदस्य किसी व्यापक संगठन के सदस्य हैं, जिसमें उच्च तबकों की भूमिका ताकतवर और निर्णायक है, तब वहाँ जातिगत व्यवस्था के तहत सत्ता और ताकत का नया ढांचा बना हुआ दिखाई देता है। **(जातिगत व्यवस्था में स्थिति)**

उसी संगठन में यदि अनुसूचित जाति का ही एक अन्य व्यक्ति सदस्य है, जो शारीरिक रूप से दिव्यांग है। तब वहाँ उस पर सत्ता की एक और परत चढ़ जाती है। यानी शारीरिक सक्षमता भी सत्ता और ताकत का कारक है। **(शारीरिक सक्षमता)**

हो सकता है कि संगठन में उच्च तबकों के कई लोग हों। उनमें से एक सदस्य के पास गांव में सबसे ज्यादा जमीन हो। तब उस संगठन में शामिल उस व्यक्ति, जिसके पास सबसे ज्यादा जमीन है, की हैसियत उच्च तबकों के अन्य लोगों की तुलना में ज्यादा प्रभावशाली नहीं होगी? यानी संसाधन पर नियंत्रण भी एक कारक है। **(प्राकृतिक संसाधन पर नियंत्रण)**

लेकिन उसी संगठन में इस वर्ष एक पिछड़ी जाति के व्यक्ति ने जनपद उपाध्यक्ष के पद का चुनाव जीत लिया। वह उच्च तबके का नहीं है और उसके पास ज्यादा जमीन भी नहीं है। क्या उसकी स्थिति में बदलाव नहीं होगा? बदलाव होगा क्योंकि राजनीतिक ताकत सत्ता के ढाँचे में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। **(राजनीतिक कारक)**

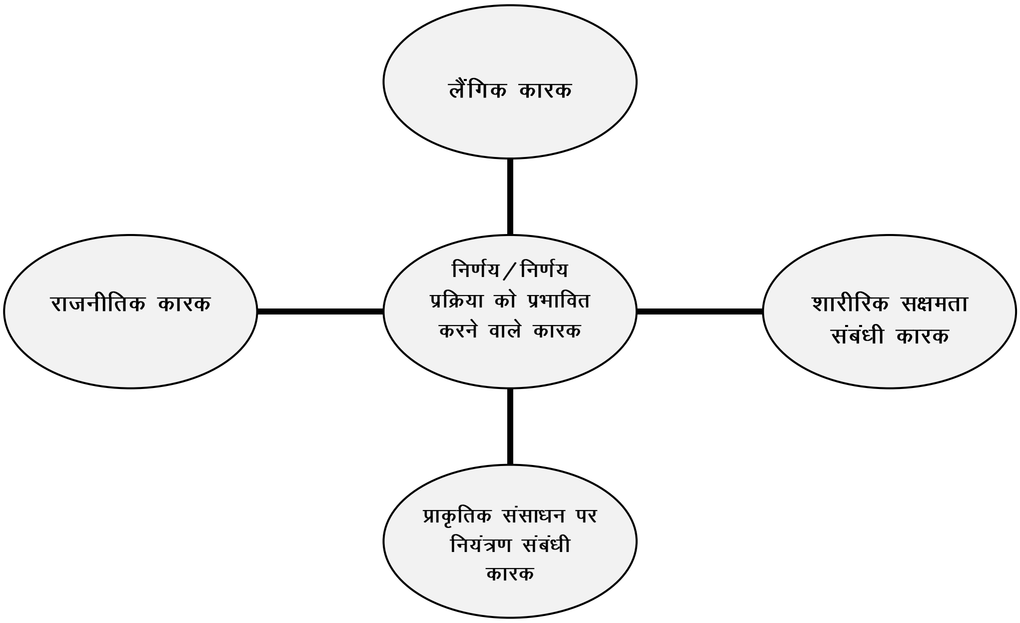

ये तो कुछ उदाहरण हैं। हम समाज में सत्ता और ताकत के ढाँचे के बारे में विचार करते हैं, तब हमें सबसे पहले सामाजिक ताने–बाने और उसमें रहने वाले लोगों की स्थिति के बारे में जानना होगा। जब हम समुदाय की बात करते हैं, तब संवैधानिक रूप से उनमें अनुसूचित जाति, और अनुसूचित जनजाति, का उल्लेख है। एक शब्द में सब कुछ जमा कर दिया जाता है लेकिन हम यदि सामाजिक ढाँचे में सत्ता के स्वरुप को समझना चाहते हैं, तो हमें यह जान लेना चाहिए कि अनुसूचित जाति का मतलब कोई एक समूह या वर्ग नहीं है। 2011 की जनगणना के मुताबिक मध्यप्रदेश में ही बागडी, बहना, बलाई, औधेलिया, बासोद, बर्गुंडा, बेदिया, चिकवा, धानुक, डोम, होलिया जैसे 49 समुदाय हैं। इन सबके अलग–अलग रोज़गार हैं। इनकी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति भी बिलकुल भिन्न–भिन्न है।

इसी तरह अक्सर बात होती है अनुसूचित जनजाति यानी आदिवासियों के विकास और कल्याण की। जब हम इस समुदाय के भीतर के ढाँचे को समझने की कोशिश करते हैं, तब हमें पता चलता है कि ये कोई एकल समुदाय या समूह नहीं है। अनुसूचित जनजातियों में बैगा, कोल, मुंडा, भील, भिलाला, कँवर, सहरिया, कोरकू, हल्बा जैसी 43 अनुसूचित जनजातियाँ है। इन सबकी आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक स्थितियां बहुत अलग–अलग है।

इसी तरह अन्य पिछड़ी जातियों के समुदाय में भिन्न–भिन्न 66 जातियाँ हैं। जिनके रोज़गार और सामाजिक–आर्थिक–राजनीतिक स्थिति भिन्न–भिन्न है।

स्टीवन ल्युक्स ने सत्ता के तीन आयामों की चर्चा करके उसके कई पहलुओं को समेटने की कोशिश की है। उनके अनुसार सत्ता का मतलब है निर्णय लेने का अधिकार अपनी मुट्ठी में रखने की क्षमता, सत्ता का मतलब है राजनीतिक एजेंडे को अपने पक्ष में मोड़ने के लिए निर्णयों के सार को बदल देने की क्षमता और सत्ता का मतलब है लोगों की समझ और प्राथमिकताओं से खेलते हुए उनके विचारों को अपने हिसाब से नियंत्रित करने की क्षमता।

सत्ता के प्रमुख आयाम

- निर्णय लेने का अधिकार अपनी मुट्ठी में रखने की क्षमता
- राजनीतिक एजेंडे को अपने पक्ष में मोड़ने के लिए निर्णयों के सार को बदल देने की क्षमता
- समझ और प्राथमिकताओं से खेलते हुए उनके विचारों को अपने हिसाब से नियंत्रित करने की क्षमता

जब हम लोकतंत्र के अंदर की राजनीतिक प्रक्रिया सत्ता और ताकत के स्वरुप की बात करते हैं, तब यह भी दिखाई देता है कि वहाँ की प्रक्रिया में अपने मन या सोच के मुताबिक निर्णय करवाने के लिए एकाधिकार का सिद्धांत लागू नहीं किया जाता है। वहाँ इसके लिए दूसरे, तीसरे और अन्य स्तरों पर सत्ता के कम प्रभावी होती परत बना दी जाती है। ये परतें या इन स्तरों का राजनीतिक नेतृत्व सबसे ताकतवर और प्रभावी व्यक्ति की सोच के मुताबिक निर्णय के लिए माहौल बनाता है ताकि किसी को यह महसूस न हो कि निर्णय केन्द्रीय नेतृत्व से आया है। इस तरह की राजनीतिक व्यवस्था में उन लोगों को समाज में सत्ता स्थापित करने का अवसर मिलता है जो केन्द्रीय नेतृत्व के साथ होते हैं, क्योंकि उन्हें मुख्य्य राजनीति में प्रभावी माना जाता है।

चित्र 9.3. : सरपंच पति

जब हम महिलाओं के नज़रिए से समाज और सामुदायिक संगठनों में सत्ता का स्वरुप देखते हैं तब हमें यह बात साफ़ तौर पर दिखाई देती है कि पितृसत्तात्मकता हर व्यवहार, हर प्रक्रिया और हर चरण में मौजूद है। इस व्यवस्था में हमें कुछ उदाहरण दिखाई देते हैं कि किसी महिला ने व्यक्तिगत कोशिशों से बड़ा मुकाम हासिल कर लिया; किन्तु जब हम यह देखते हैं कि क्या वह महिला उस मुकाम पर पंहुच कर निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र हुई, तब हम देखते कि उसे निर्णय वास्तव में उन्ही दायरों में लेने होंगे, जो पितृसत्तात्मक व्यवस्था के द्वारा तय किये गए हैं।

एक उदाहरण लीजिए। हमारे देश में कई राज्यों में ग्राम पंचायतों में सरपंच के आधे पद महिलाओं के लिए आरक्षित कर दिए गए हैं। महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण के लिए एक यह बहुत महत्वपूर्ण कदम है। किन्तु चुनी हुई महिला सरपंच के स्थान पर उसका पति या परिवार के अन्य पुरुष सदस्य उस पद के दायित्वों का निर्वहन करते हैं। वास्तव में वह अवसर ही नहीं मिल पाता है कि महिलाएं अपनी राजनीतिक ताकत को मज़बूत कर सकें।

हम देखते हैं कि कई महिलायें सरपंच चुने जाने के बाद अपनी भूमिका को सक्रिय रूप से निभाने की कोशिश करती हैं। इसके लिए उन्हें संघर्ष करना पड़ता है। लेकिन जब किसी काम के लिए उन्हें विकासखण्ड या जिला मुख्यालय जाना होता है, तो उन्हें कई बार इसकी अनुमति परिवार से नहीं मिल पाती है; कारण क्योंकि व्यापक समाज को उनका पंचायत सचिव, जो एक पुरुष है, के साथ बाहर जाना ठीक नहीं लगता या फिर उन्हें वाहन चलाना सीखने का मौका नहीं मिला, जिसके कारण वे किसी अन्य पर निर्भर होती हैं। फिर जब उन्हें ज्यादा दिनों के लिए प्रशिक्षण के लिए प्रशिक्षण केंद्र जाना होता है, तब भी उन्हें कई बार समाज से सहयोग नहीं मिलता है; क्यों? यदि वे 10 दिन के लिए प्रशिक्षण में जायेंगी तो घर की जिम्मेदारी कौन निभाएगा और बच्चों की देखभाल कौन करेगा?

क्या वास्तव में सत्ता और ताकत एक नकारात्मक उपलब्धि है?

नहीं; ऐसा नहीं है। सत्ता और प्रभाव के कारकों के शिक्षा, ज्ञान, सम्मान और क्षमताओं में बढ़ोत्तरी होना भी शामिल है। **हान्ना एरेंत** सत्ता को केवल प्रभुत्व की संरचना के तौर पर देखने के लिए तैयार नहीं हैं। अपनी रचना **'व्हाट इज़ अथॉरिटी'** में वे सत्ता को एक बढ़ी हुई क्षमता के रूप में व्याख्यायित करती हैं जो सामूहिक कार्यवाही के ज़रिये हासिल की जाती है। लोग जब आपस में संवाद स्थापित करते हैं और मिल–जुल कर एक साझा उद्यम की ख़ातिर कदम उठाते हैं तो उस प्रक्रिया में सत्ता जन्म लेती है। सत्ता का यह रूप वह आधार मुहैया कराता है जिस पर खड़े होकर व्यक्ति नैतिक उत्तरदायित्व का वहन करते हुए सक्रिय होता है।

9.3.3 : समुदाय में सत्ता शक्ति के ढाँचों के प्रकार

अब तक हमने समुदाय में सत्ता और ताकत के प्रभावी कारकों को समझने की कोशिश की। सबसे बुनियादी बात यह है कि हमारे सामाजिक सन्दर्भों में समुदाय के भीतर सत्ता या प्रभुत्व के ढाँचे में जाति और लैंगिक भेदभाव सबसे प्रभावी भूमिका निभाते हैं। इसके बाद जब सामुदायिक सत्ता ढांचों के प्रकारों की बात की जाती है तब मुख्य रूप से चार प्रकार के ढांचों का उल्लेख किया जाता है–

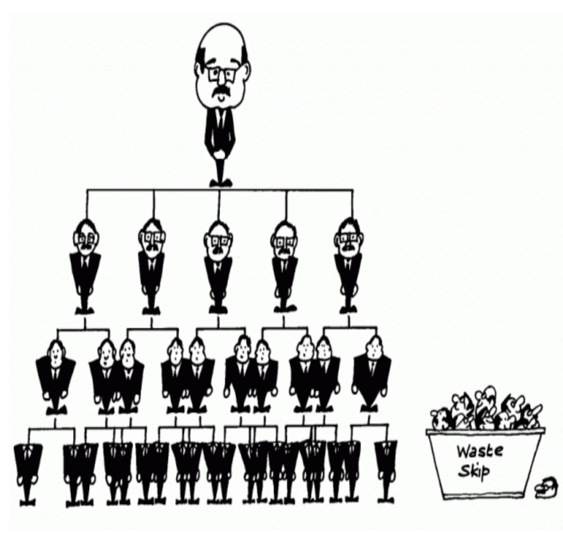

चित्र 9.3. : समुदाय में सत्ता शक्ति के ढांचे

बहुलतावादी (प्लुरलिस्टिक) – यह मुख्य रूप से लोकतान्त्रिक व्यवस्थाओं में जिस तरह से प्रक्रिया चलती है, उसी तरह सामाजिक सत्ता का यह ढाँचा भी काम करता है। इसमें वस्तुतः प्रभावी होने वाली केंद्रीयकृत ताकत नहीं होती है। सत्ता और ताकत हासिल करने की क्षमता प्राप्त करने के अवसर व्यापक रूप से उपलब्ध होते हैं। इसे हासिल करने के लिए एक किस्म की प्रतिस्पर्धा का माहौल होता है। इसमें यूँ तो समुदाय के हितों को प्रमुखता दी जाती है, किन्तु जब प्रभाव और ताकत की बात आती है तो इसे

व्यक्तिगत स्तर पर हासिल करने की कोशिश होती है। फिर अगले चरण में व्यक्तिगत ताकतों को एक साथ जुटाकर प्रभावी सत्ता को हासिल करने की कोशिश होती है, ताकि उस सत्ता को सामाजिक सत्ता के साथ–साथ राजनीतिक मान्यता भी मिल सके।

अभिजात्य या संभ्रान्तवादी (एलीटिस्ट) – लोगों का एक छोटा समूह, यहाँ तक कि एक परिवार, ताकत, संसाधनों पर नियंत्रण करता है और व्यापक समुदाय की प्राथमिकताओं को भी तय करने लगता है। इस ढाँचे में कुछ लोग सबसे ऊपर के सिंहासन पर बैठ जाते हैं और राजनीतिक–प्रशासनिक–सामाजिक तंत्र को गहरे तक प्रभावित करते हैं। यहाँ तक कि उनकी कोशिश होती है कि सरकार की नीतियां भी उनकी मन–मर्ज़ी के मुताबिक बनें। इनके पास बहुत सारे संसाधन होते हैं। उनमें से थोड़े–बहुत रिस कर नीचे तक पंहुच पाते हैं। इससे गैर–बराबरी बहुत बढ़ती जाती है। जाति और लैंगिक कारक इसमें बहुत प्रभावी होते हैं।

चित्र : 9.3. अभिजात्य या गांव के संभ्रान्त व्यक्ति के हांथों में ताकत

वर्गवादी (क्लास बेस्ड) – जो संसाधनों का सीधे उपयोग करे, उन संसाधनों पर उसका ही हक होना चाहिए। ये संसाधनों के समान वितरण के मूल्य में विश्वास रखते हैं। वे मानते हैं कि श्रम महत्वपूर्ण है और इसी से उनकी ताकत का जुड़ाव भी है। इस सोच में संसाधनों पर किसी एक वर्ग या परिवार के नियंत्रण के स्थान पर व्यापक समाज के नियंत्रण की बात कही जाती है ताकि शोषण को पनपने से रोका जा सके और कोई वंचित न रहे। यहाँ सत्ता की ताकत समुदाय के पास होती है, किसी एक व्यक्ति या समूह के पास नहीं।

वृद्धि मशीन (ग्रोथ मशीन) – वर्गवादी सत्ता व्यवस्था से भिन्न यह एक समूह विशेष आधारित सत्ता का ढांचा खड़ा करती है। यह मशीन मानती है कि समुदाय की आर्थिक वृद्धि से उन्हें आर्थिक लाभ होगा। इसके लिए वे अलग–अलग हित–धारकों को आर्थिक लाभ के लिए अपने साथ मिला लेते हैं। यदि देश में बहुत सी इमारतें बनायी जाना हैं, तो वे सीमेंट बनाने वालों को साथ में लेंगे। इमारतें बन कर तभी बिकेंगी जब, लोगों के पास पैसा होगा। ऐसे में वे बैंकों के समूह को अपने साथ लेते हैं। इससे वे अपने लाभ अर्जित करने की कोशिश करते हैं। इस तरह के सत्ता ढाँचे में एक ही मकसद होता है आर्थिक लाभ और आर्थिक लाभ के जरिये सरकार को प्रभावित करने की ताकत हासिल करना। जिससे और ज्यादा लाभ कमाया जा सके।

9.3.4 समुदाय में सत्ता और ताकत के ढाँचे को समझने की जरूरत

हमें सत्ता के ढाँचे को समझना इसलिए जरूरी है ताकि हम यह जान सकें कि

1. समुदाय में समुदाय के लिए निर्णय लेने का अधिकार किसके पास है? क्या यह एक संयुक्त और सहभागी प्रक्रिया है? इसमें किनके हित हैं और क्या हित हैं?
2. संसाधनों पर किनका नियंत्रण है और कौन उन्हें प्रभावित करता है और कौन से संसाधन महत्वपूर्ण माने जाते हैं? संसाधन मतलब प्राकृतिक संसाधन, आर्थिक संसाधन, श्रम, शिक्षा, कौशल, ज्ञान–जानकारी–तकनीक आदि।
3. कौन हैं, जो निर्णय लेने की प्रक्रिया में शामिल नहीं हैं और क्यों?
4. यह जानने की कोशिश करना कि समुदाय की ताकत दोनों तरफ से – समुदाय के भीतर और बाहर, कैसे विकसित की जा सकती है?
5. सामुदायिक विकास और सामजिक बदलाव की कोशिशें ज्यादा समावेशी, पारदर्शी और जवाबदेह बनायी जा सकें।
6. समुदाय की अपनी प्राथमिकताएं खुद तय करने की स्वतंत्रता मिल सके।
7. जब वे खुद तय करेंगे तो उसकी निगरानी और रख–रखाव में भी जिम्मेदारी निभाएंगे।
8. समुदाय में समुदाय के प्रति प्रतिबद्ध नेतृत्व होगा और प्रभावी भूमिका निभा पायेगा।

आप सभी लोग जो इस पाठ्यक्रम में शामिल हैं। वे समाज के सजग लोग हैं। कहीं न कहीं सामाजिक कार्य और समुदाय की जरूरतों को पूरा करने में मदद कर रहे हैं। कोई न कोई रचनात्मक भूमिका निभा रहे हैं। कुल मिलकर आपने समुदाय को करीब से देखा है, जांचा है और परखा भी है। यही अनुभव आपको सत्ता और ताकत की परिभाषा को एक खास स्वरूप में समझने में सबसे ज्यादा मदद करेगा। इस कार्य के व्यावहारिक अभ्यास हेतु कुछ गतिविधियाँ और प्रारुप इसी इकाई में '**आओ करके देखें**' शीर्षक में दी गई है।

हमने जाना

- प्रत्येक परिवार, समुदाय और समाज में सत्ता शक्ति और ताकत होती है। जो निर्णयों को प्रभावित करती हैं।
- सत्ता या ताकत की अवधारणा के मूल में यह विचार है कि एक व्यक्ति परिवार या समूह अपनी मन–मर्जी से खुद कोई काम कर सकता है या करवा सकता है।
- निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित करने में लैंगिक कारक, जातिगत व्यवस्था, संसाधनों पर नियंत्रण सहित अनेक सामाजिक–आर्थिक कारक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

- वास्तव में सत्ता और ताकत एक नकारात्मक विचार नहीं है। सकारात्मक बदलाव के लिये भी इसका उपयोग किया जा सकता है।
- समुदाय में सत्ता और शक्ति का ढाँचा बहुलतावादी, अभिजात्यवादी, वर्गवादी, वृद्धि मशीन इत्यादि रूपों में हो सकता है।

कठिन शब्दों के अर्थ

- बहुलतावादी : ऐसा सामाजिक ढांचा जिसमें ताकत केन्द्रीयकृत नहीं होती है सत्ता और ताकत हासिल करने की क्षमता प्राप्त करने के अवसर व्यापक रूप से उपलब्ध होते हैं।
- अभिजात्यवादी : लोगों का ऐसा समूह जो राजनीतिक–प्रशासनिक सामाजिक तंत्र को गहराई से प्रभावित करे और स्वयं के लाभ के लिए समुदाय की प्राथमिकताएं तय करने में भूमिका निभाएं।

अभ्यास के प्रश्न

- समुदाय में सत्ता शक्ति और ताकत की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।
- समुदाय में सत्ता और ताकत किन आधारों पर तय होती है और उसकी चारित्रिक विशेषतायें क्या हैं?
- सामाजिक व्यवस्था में निर्णय को प्रभावित करने वाले प्रभावी कारक कौन–कौन से हैं? अपने आस–पास के उदाहरणों से स्पष्ट करने का प्रयत्न कीजिए।
- क्या सत्ता और ताकत व्यक्ति और समाज को नकारात्मक रूप में प्रभावित करती हैं? पक्ष–विपक्ष में तर्क के साथ अपने विचार लिखिये।
- समुदाय में सत्ता और शक्ति की संरचनाओं (ढाँचों) के प्रमुख प्रकार लिखिये।

आओ करके देखें

यहाँ प्रश्ननुमा कुछ बिंदु लिखे गए हैं, आपको इनके उत्तर खोजना है। इसके लिए यह जरूरी है कि आप अपने गांव–क्षेत्र या अंचल के बारे में कुछ सोचें –

1. आप कुछ देर के लिए अपने समाज और समुदाय के बारे में सोचिये कि उसमें कौन–कौन लोग रहते हैं? हो सकता है कि आपके सामने मुख्य रूप से जातियां और अलग–अलग काम करने वाले समूहों का चित्र उभर कर आये। उसके बारे में और गहराई से सोचिये।

वे लोग क्या करते हैं यानी उनके काम क्या है? उनकी पहचान क्या है यानी लोग उन्हें किस रूप में जानते हैं? क्या आप मानते हैं कि उन सभी को मिलाकर ही हमारा समाज बनता है? अब जरा सोचिये कि जो–जो

समुदाय हमारे समाज में हैं, क्या उनकी समाज में स्थिति और प्रभाव एक जैसा है? कौन सी ऐसी बाते हैं जो समाज के भीतर किसी समुदाय को ज्यादा महत्वपूर्ण बनाती हैं और कुछ को कम? जैसे– जाति, आर्थिक स्थिति, उनके काम या पेशा, राजनीतिक रसूख, उनकी संख्या का ज्यादा होना, उनके पास संसाधन ज्यादा होना या कोई और बात। इन बिंदुओं के उत्तरों को आप अपनी कापी में लिख लें।

2. अब जरा सोचिये कि हमारे यहाँ वो कौन से लोग या व्यक्ति या समूह हैं, जो समुदाय में निर्णय को प्रभावित करते हैं? जैसे त्यौहार मनाना है, समुदाय में किसी परिवार के यहाँ लड़के या लड़की की शादी होना है, हेंडपम्प लगवाना है, इसका निर्णय करना है कि किसे सरकारी योजना का लाभ मिलना चाहिए, कोई सामुदायिक कार्यक्रम होना है, पंचायत का चुनाव किसे लड़ना चाहिए, विधानसभा, लोकसभा चुनाव में किसे वोट दिए जाएँ आदि–आदि। विचार कीजिए कि आपने इन लोगों को प्रभावशाली या प्रभुत्व वाला व्यक्ति या ताकतवर समूह क्यों माना? यदि वे प्रभावशाली या ताकतवर हैं, तो आखिर उन्हें यह प्रभावित करने की ताकत मिली कहाँ से? अब आप वो दस बिंदु लिखिए, जो समुदाय में किसी को ज्यादा प्रभावी या ताकतवर बनाते हैं।

आपने अपनी सामाजिक प्रयोगशाला के रूप में जिस गांव का चयन किया है उसका सावधानीपूर्वक अवलोकन कर निम्नांकित प्रश्नों के उत्तर खोजने का प्रयास करें–

- इस गांव का सामाजिक ताना–बाना क्या है; यानी गांव में कौन–कौन से समुदाय के लोग रहते हैं? आपको वे सूचक ध्यान में रखने/लिखने होंगे, जिनके आधार पर आप लोगों/परिवारों के समूह को "समुदाय" मान रहे हैं? उन सभी समुदायों के परिवारों की संख्या कितनी है? उन समुदायों में लोगों/परिवारों के रोज़गार के मुख्य साधन कौन–कौन से हैं? वह समुदाय कौन सा है, जिनके पास साल भर नियमित रूप से रोज़गार पाने के साधन नहीं हैं? (समुदाय के बारे में साफ़–साफ़ पता लगाएं और साधनों को स्पष्ट करें। उस समुदाय के पास सुनिश्चित रोज़गार के साधन क्यों नहीं हैं? जरा यह भी बताईये कि क्या इस समुदाय को हक आधारित योजनाओं का लाभ मिलता है? क्या सभी पात्र व्यक्तियों को खाद्य सुरक्षा, आंगनवाड़ी, मध्यान्ह भोजन, स्वास्थ्य गारंटी योजना, सामाजिक सुरक्षा पेंशन, महात्मा गांधी ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना, स्व–रोज़गार के लिए आर्थिक सहयोग या बैंक से क़र्ज़ आदि लाभ मिलते हैं? यदि नहीं तो क्यों?

- यह गतिविधि करने के लिए आपको गांव के सामाजिक समूहों के बारे में जानकारी इकठ्ठा करना होगी। इसके लिए आपको अलग–अलग बस्तियों में समूह चर्चाएं करके जानकारी इकठ्ठा करना होगी। जानकारी पाने का दूसरा स्रोत होगा–ग्राम पंचायत, जहाँ से आपको जनसंख्या, परिवार और सामाजिक–हक आधारित योजनाओं की जानकारी मिल जायेगी। गुणात्मक जानकारी इकठ्ठा करने के लिए आपको हर समुदाय के कुछ चुने हुए लोगों के साथ मुलाक़ात करना होगी। उनका साक्षात्कार करना होगा। आखिर में यह जरूर जांचियेगा कि इस प्रायोगिक गतिविधि को करते समय आप अपने पूर्वाग्रहों (अपनी सोच और जानकारी) के आधार पर तो आगे नहीं बढे हैं? ऐसे में हमें अपने क्षेत्र में वास्तविकता को समझने की कोशिश करना होगी। हमने मुख्यतः इस

प्रायोगिक गतिविधि में यह जांचने की कोशिश करना है कि समुदाय और समुदाय के संगठन की प्रक्रिया में सत्ता और ताकत का ढांचा क्या है? उसमें कौन–कौन से कारक हैं? उनका क्या प्रभाव पड़ता है? और क्या इनमें से किसी को बदलने की जरूरत होगी–

<table>
<tr><th>सत्ता और ताकत के कारक
(1)</th><th>अर्थ
(2)</th><th colspan="2">भूमिका
(3)</th><th>क्या बदलने की जरूरत है?
हाँ, तो क्या और क्यों?
नहीं, तो क्यों?
(4)</th></tr>
<tr><td>हमारे गांव और समुदाय का सामाजिक ढांचा क्या है?
इसमें शामिल जातियों और उनके समुदायों के बारे में जानना।</td><td>उनके आपसे में रिश्ते और सम्बन्ध क्या हैं? यह स्मरण रखते हुए कि रिश्तों और संबंधों को कुछ खास कसौटियों पर परखना होगा – पारिवारिक रिश्ते, कामकाज के रिश्ते, धार्मिक और सामाजिक सम्बन्ध।</td><td>कोई भी सामुदायिक निर्णय लेने में सबसे ज्यादा प्रभावी भूमिका किनकी होती है और क्यों?</td><td>कोई भी सामुदायिक निर्णय लेने में सबसे कम प्रभावी भूमिका किनकी होती है और क्यों?</td><td></td></tr>
<tr><td colspan="5">क्या इसमें सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया के नज़रिए से सत्ता और ताकत का कोई कारक/ सूचक दिखाई देता है? सत्ता और ताकत का वह प्रभाव सामुदायिक संगठन की प्रकिया पर सकारात्मक है या नकारात्मक?</td></tr>
<tr><td>हमारे गांव और समुदाय का आर्थिक ढांचा क्या है?
अलग–अलग समुदाय, जो गांव में रहते हैं, उनकी आर्थिक स्थिति</td><td>रोजगार–आजीविका–आर्थिक संसाधनों के सन्दर्भ में अलग–अलग समुदायों के बीच के रिश्ते क्या हैं?</td><td>कोई भी सामुदायिक निर्णय लेने में आर्थिक रूप से प्रभावशाली समूह की क्या भूमिका और प्रभाव होता है और</td><td>कोई भी सामुदायिक निर्णय लेने में आर्थिक रूप से सबसे कमज़ोर समूह की क्या भूमिका और</td><td></td></tr>
</table>

क्या है? उनकी रोज़गार और आजीविका के स्रोत क्या हैं और वे कितने स्थायी हैं?		क्यों?	प्रभाव होता है और क्यों?	
क्या इसमें सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया के नज़रिए से सत्ता और ताकत का कोई कारक/सूचक दिखाई देता है? सत्ता और ताकत का वह प्रभाव सामुदायिक संगठन की प्रकिया पर सकारात्मक है या नकारात्मक?				
हमारे गांव और समुदाय में सबसे ज्यादा आर्थिक और प्राकृतिक संसाधन किनके पास हैं? जब हम संसाधनों की बात करते हैं, तब हम यह देखने की कोशिश करते हैं कि सबसे ज्यादा जमीन या कोई भी प्राकृतिक संसाधन किनके पास हैं? व्यक्तिगत और सामुदायिक संसाधनों को अलग–अलग करके देखने की कोशिश की जाना चाहिए।	जिनके पास सबसे ज्यादा संसाधन हैं, उनकी सामजिक और आर्थिक स्थिति कैसी है? और उनके अन्य समुदायों/परिवारों के साथ कैसे रिश्ते हैं?	कोई भी सामुदायिक निर्णय लेने में सबसे संसाधन संपन्न समूह की क्या भूमिका होती है और क्यों?	कोई भी सामुदायिक निर्णय लेने में उन लोगों/समूह की क्या भूमिका होती है, जिनके पास कोई संसाधन नहीं हैं या बहुत कम संसाधन हैं और क्यों?	
क्या इसमें सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया के नज़रिए से सत्ता और ताकत का कोई कारक/सूचक दिखाई देता है? सत्ता और ताकत का वह प्रभाव सामुदायिक संगठन की प्रकिया पर सकारात्मक है या नकारात्मक?				
हमारे गांव और समुदाय में राजनीतिक रूप से	हमारे गांव और समुदाय में राजनीतिक रूप से	कोई भी सामुदायिक निर्णय लेने में	कोई भी सामुदायिक निर्णय	

प्रभावशाली समुदाय/परिवार/व्यक्ति हर परिस्थिति में समुदाय एक राजनीतिक इकाई भी होता है। हम यह देखने की कोशिश करते हैं कि हमारे यहाँ वो कौन सा समुदाय/परिवार/व्यक्ति है जो सबसे ज्यादा प्रभावशाली है?	प्रभावशाली समुदाय/परिवार/व्यक्ति जो समुदाय/परिवार/व्यक्ति राजनीतिक रूप से प्रभावशाली है, उनके अन्य समुदायों या व्यापक समूह के साथ क्या रिश्ते हैं?	राजनीतिक रूप से प्रभावशाली समुदाय/परिवार/ व्यक्ति की क्या भूमिका होती है और क्यों?	लेने में राजनीतिक रूप से सबसे कम प्रभावशाली समुदाय/परिवार/ व्यक्ति की क्या भूमिका होती है और क्यों?	
क्या इसमें सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया के नज़रिए से सत्ता और ताकत का कोई कारक / सूचक दिखाई देता है? सत्ता और ताकत का वह प्रभाव सामुदायिक संगठन की प्रकिया पर सकारात्मक है या नकारात्मक?				
हमारे गांव और समुदाय में महिलाओं की स्थिति जरा यह पड़ताल करें कि हमारे गांव/समुदाय में महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और स्वास्थ्य–शिक्षा–प्रजनन स्वास्थ्य की क्या स्थिति है?	महिलाओं की इस स्थिति को अलग–अलग समुदायों/सामाजिक समूहों के सन्दर्भ में जांचने की कोशिश करें?	कोई भी सामुदायिक निर्णय लेने में गांव/समुदाय की महिलाओं की सहभागिता होती है? क्या वे निर्णायक भूमिका निभा सकती हैं? यदि वे कोई भूमिका लें, तो क्या उन्हें समाज का सहयोग मिल सकता है?		
क्या इसमें सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया के नज़रिए से सत्ता और ताकत का कोई कारक / सूचक दिखाई देता है? सत्ता और ताकत का वह प्रभाव सामुदायिक संगठन की प्रकिया पर सकारात्मक है या नकारात्मक?				
हमारे गांव और समुदाय में सबसे वंचित और	इस समूह/परिवारों से समाज के अन्य समुदायों के	कोई भी सामुदायिक निर्णय लेने में गांव/समुदाय के इन परिवारों की		

हाशिए पर रहने वाला समूह/परिवार नज़र दौडाएं और देखें कि हमारे गांव और समुदाय में सबसे वंचित और हाशिए पर रहने वाला समूह या परिवार कौन सा है? वह किस सामाजिक समूह से सम्बन्ध रखता है?	क्या रिश्ते हैं?	सहभागिता होती है? क्या वे निर्णायक भूमिका निभा सकते हैं? यदि वे कोई भूमिका लें, तो क्या उन्हें समाज का सहयोग मिल सकता है?	
क्या इसमें सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया के नज़रिए से सत्ता और ताकत का कोई कारक / सूचक दिखाई देता है? सत्ता और ताकत का वह प्रभाव सामुदायिक संगठन की प्रकिया पर सकारात्मक है या नकारात्मक?			
हमारे गांव और समुदाय में सबसे वरिष्ठ, जानकार व्यक्ति कौन हैं? हम यह जानने की कोशिश करें कि हमारे समुदाय या बसाहट में सबसे वरिष्ठ (उम्र, अनुभव और जानकारी, ज्ञान के संदर्भ में) व्यक्ति कौन हैं?	उनकी समाज/समुदाय में पहचान किस रूप में हैं? क्या उनकी स्वीकार्यता है?	कोई भी सामुदायिक निर्णय लेने में गांव/समुदाय के इनकी सहभागिता होती है? क्या वे निर्णायक भूमिका निभा सकते हैं? यदि वे कोई भूमिका लें, तो क्या उन्हें समाज का सहयोग मिल सकता है?	

प्रायोगिक गतिविधि के सन्दर्भ में आपके लिए कुछ प्रश्न

- 1 से 4 तक के कालमों की शीर्षकों को गौर से पढ़िए और उनका मतलब समझिए। इसमें हर कालम के तहत लिखे गए बिंदुओं के आधार पर आपको एक तरह का गहन सामाजिक अध्ययन करना है, ताकि कालम – 4 में दिए गए प्रश्न का उत्तर खोजा जा सके।
- इस सांचे में हमारे समुदाय में या समुदाय के बाहर के दायरे में निर्णय लेने की प्रक्रिया और अंतिम निर्णय को कौन प्रभावित करता है?
- निर्णय लेने की प्रक्रिया और निर्णय को प्रभावित क्यों किया जाता है?
- इसमें किसके हित होते हैं?
- वास्तव में क्या हम यह देख पा रहे हैं कि कब और किन स्तरों पर एक अच्छे मकसद या सोच से निर्णय को प्रभावित किया जा रहा है और कहाँ निजी हितों के लिए ऐसा किया जाता है?
- यदि हमें अच्छे मकसद के लिए या एक बेहतर समाज के निर्माण के लिए इन सत्ता संबंधों–ताकत के समीकरण को बदलना होगा, तो इसके लिए कौन सी पांच कोशिशें करना होंगी?

अधिक जानकारी के लिए संदर्भ सूत्र

यह समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, समाजकार्य, प्रबन्धन इत्यादि अनेक सामाजिक विज्ञानों की विषय–वस्तु हैं। अतः विस्तार से जानकारी के लिये इन विषयों की संबंधित पुस्तकों से अध्ययन किया जा सकता है। कुछ संदर्भ सूत्र निम्नवत हैं–

- **मानव समाज संगठन एवम् विघटन के मूल तत्व** — डा. डी.के.सिंह, डा. सौरभ पालीवाल, डा. रोहित मिश्र, न्यू रायल बुक कंपनी, लखनऊ
- **समाजशास्त्र की मूलभूत अवधारणायें** — डा. अरूण कुमार सिंह, न्यू रायल बुक कंपनी, लखनऊ
- **व्यक्ति और समाज** — प्रोफेसर पीडी मिश्र, डॉ (श्रीमती) बीना मिश्रा, न्यू रायल बुक कंपनी, लखनऊ
- **भारतीय समाज** — श्यामाचरण दुबे
- **मानव और संस्कृति** — श्यामाचरण दुबे
- **परंपरा इतिहास बोध और संस्कृति** — श्यामाचरण दुबे

■■■

9.4 : सामुदायिक विकास और सहभागिता

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप जान सकेंगे कि–

- सामुदायिक विकास का क्या अर्थ है?
- सामुदायिक विकास के संदर्भ में विकास के विविध आयामों और चरित्र से परिचित हो सकेंगे।
- सामाजिक पहल और सामाजिक आन्दोलन की समानताओं और अन्तर को पहचान सकेंगे।
- सामुदायिक सहभागिता के अर्थ और महत्व से परिचित हो सकेंगे।
- सामाजिक अंकेक्षण क्या है? इसे जानकर सामाजिक बदलाव में इसकी भूमिका समझ सकेंगे।

9.4.1 सामुदायिक विकास – अवधारणा, चरित्र और दायरा

चित्र 9.4. सामुदायिक विकास

इस इकाई में हम सामुदायिक विकास के बारे में चर्चा करेंगे। सामुदायिक विकास दो शब्दों से मिलकर बना है– 'समुदाय' और 'विकास'। इसके पहले की इकाईयों में हमने समुदाय, सामुदायिक संगठन, समुदाय संगठक, समुदाय में शक्ति ताकत और सत्ता के सिद्धान्तों के बारे में विस्तार से जानकारी प्राप्त की है। आप याद करें तो पायेंगे कि पाठ्यक्रम के पहले वर्ष के मॉड्यूल– विकास की समस्याएं एवं मुद्दे में हमने विकास की अवधारणा उसके विविध आयामों और उसे मापने के अलग–अलग पैमानो की चर्चा की थी। अच्छा होगा यदि इस इकाई को प्रारम्भ करने से पहले एक बार उस मॉड्यूल की प्रारम्भिक इकाईयों को पुनः पढ़ लें। विकास की चर्चा हम यहाँ पुनः छेड़ रहे हैं। इस बार हमारा संदर्भ सामुदायिक विकास होगा। तो आइये! विकास की अवधारणा पर एक नये तरीके से फिर से गौर कर लें।

लगभग साढ़े सात सौ सालों से **'विकास'** शब्द पर बहस चल रही है। विकास क्या है? एक इस्लामी विद्वान **इब्न खल्दून** (सन् 1333 से 1406 के बीच) ने संभवतः पहली बार **विकास** को परिभाषित करने की कोशिश की। उनका मानना था कि हमेशा **एक नयी अवस्था में आना विकास है**। उनका मानना था कि किसी भी सामाजिक संरचना (समाज) में बदलाव लाने में आर्थिक पहलू महत्वपूर्ण होते हैं।

इसके बाद कई और विद्वानों ने विकास को परिभाषित करने की कोशिश की। यह कोशिश आज भी जारी है। विकास को स्पष्ट करने के संदर्भ में जो अभिमत या बातें प्रकाश में आयी हैं उनमें से कुछ महत्वपूर्ण बातें इस प्रकार हैं –

1. जब पारम्परिक समाज आधुनिक समाज में बदलता है (फिर चाहे वह बदलाव कहीं बाहर से या अन्य देश–समाज से ही क्यों न लाया गया हो), तब वह विकास माना जाता है। धीरे–धीरे वह बदलाव सबके बीच जाने लगता है और सभी उसे अपना लेते हैं।

2. यह भी माना जाता है कि यदि देश के लोगों की प्रति व्यक्ति आय में बढ़ोत्तरी होती है, तो इसका मतलब है कि विकास हो रहा है। लेकिन सवाल यह है कि 5 लोगों की आय 50 हज़ार रुपये हो और 95 लोगों की आय 1000 रुपये हो, तब प्रति व्यक्ति आय क्या होगी – 3450 रुपये। क्या यह सही पैमाना है?

3. केवल आर्थिक वृद्धि या सकल घरेलू उत्पाद (देश में उत्पादन, सेवाओं और उपभोग के लिए किया गया कुल लेन–देन) को भी विकास माना जाता है। लेकिन अब दुनियाभर में विकास के इस रूप पर कई सवाल हैं।

वास्तव में विकास एक प्रक्रिया है, जो निरंतर चलती रहती है। विकास की कोई एक–रूप परिभाषा नहीं हो सकती है। यह समाज की प्रवृत्ति, और सोच से तय होती है। दुनिया के कुछ देश सबसे ज्यादा आमदनी वाले देशों में शामिल हैं, किन्तु वहाँ महिलाओं को परदे में रहना होता है, उन्हें खुद निर्णय लेने या निर्णय की प्रक्रिया में शामिल होने का अधिकार ही नहीं है। तब क्या उन देशों के समाज को विकसित समाज माना जाएगा?

संयुक्त राष्ट्र संघ का मानना है कि "विकास मानव की केवल भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति से ही नहीं, किन्तु व्यक्ति के जीवन की सामाजिक दशाओं से भी सम्बन्ध रखता है। विकास का मतलब केवल आर्थिक वृद्धि ही नहीं है, बल्कि इसमें सामाजिक, सांस्कृतिक, संस्थागत और आर्थिक परिवर्तन भी शामिल हैं।"

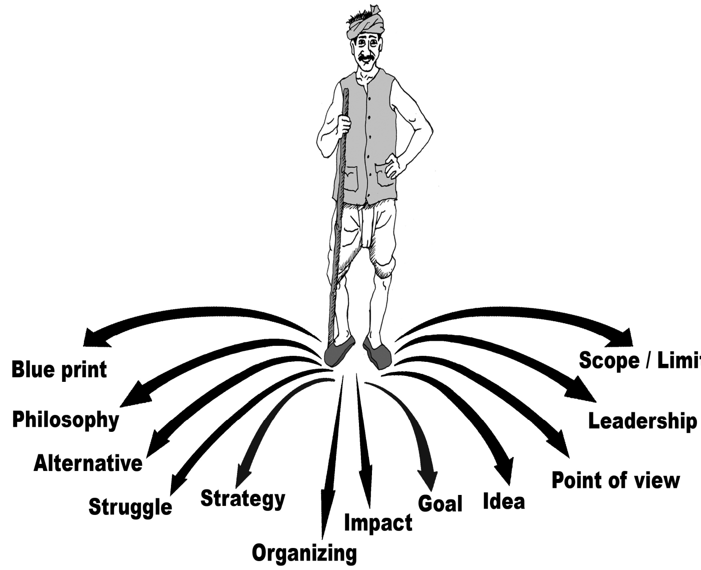

चित्रः 9.4 सामुदायिक नेतृत्व के विविध आयाम

विकास का चरित्र

विकास का चरित्र इस बात से तय होता है कि हम किसे विकास मानते हैं और विकास के मूल्य क्या हैं? विकास के लिए समाज को कुछ बातें साफतौर पर तय करनी होती है। जैसे –

1. वह किस तरह का समाज बनाना चाहता है – जिसमें बराबरी हो या गैर–बराबरी।
2. उसमें श्रम और कौशल का सम्मान होगा या नहीं।
3. हम अपनी आगे आने वाली पीढ़ियों के लिए संसाधन, पर्यावरण और मूल्यों का संरक्षण करेंगे या नहीं।
4. हमारी विकास की परिभाषा कौन तय करेगा – समाज या कोई बाहरी समूह।
5. विकास के लिए हम अपने संसाधनों का शोषण करेंगे या जिम्मेदार उपयोग।

6. हमारे विकास की परिभाषा में महिलाओं, दलितों, आदिवासियों, अल्पसंख्यकों, विकलांगता से प्रभावितों, बच्चों का प्रभावी और बराबर स्थान होगा या नहीं।

7. क्या हमारे विकास की परिभाषा हमें दूसरे समुदायों, संस्कृतियों, धर्मों और विचारों के प्रति सहनशील और सहिष्णु बनाती है या नहीं।

8. हमारे विकास में सहभागिता, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और पारदर्शिता के सिद्धांत हैं या नहीं?

9. हम विकास की योजना ऐसी बनाते हैं, जिससे पर्यावरण और समुदायों को नुकसान न पंहुचता हो या फिर कुछ समूहों के लाभ के लिये।

10. हमारे विकास का मतलब हर व्यक्ति, हर परिवार और हर समुदाय के जीवन की खुशहाली और अच्छे जीवन स्तर से है। या कुछ लोगों के पैसे वाले हो जाने से।

सबसे अच्छा विकास वह होता है। जब समुदाय अपनी जरूरतें खुद तय करता है। खुद योजना बनाता है। योजना को लागू करने की जिम्मेदारी में मुख्य भूमिका निभाता है। संसाधनों का मूल्यांकन खुद करता है। वह तय करता है कि विकास के लिए उनके पास क्या संसाधन – प्राकृतिक, कौशल संसाधन और मानव संसाधन, उपलब्ध हैं? स्थायी विकास की प्रक्रिया वही होती है, जिसमें समुदाय अपने ही संसाधनों के आधार पर विकास की योजना बनाता और लागू करता है। विकास का मूल्यांकन करते समय इस बात पर बहुत जोर दिया जाना आवश्यक है कि वह ऊँच–नीच, गरीब–अमीर, साधन सम्पन्न और साधन विपन्न के बीच की खाई को गहरा करने वाला न हो।

9.4.2 विकास के क्षेत्र या दायरे

वास्तव में एक व्यक्ति के लिए विकास का मतलब है– उसके जीवन की जरूरतों का गुणवत्तापूर्ण तरीके से पूरा होना। जिससे उसका जीवन स्तर बेहतर हो सके। जीवन स्तर के बेहतर होने का मतलब केवल नयी और आधुनिक वस्तुओं की जरूरत से नहीं है। जीवन स्तर का मतलब है कि उन्हें पीने का साफ़ पानी मिले। वे स्वस्थ रह सकें। पर्यावरण स्वच्छ रहे। बच्चे बीमार ना पड़ें। शिशु और मातृ मृत्यु न हो। जाति, लिंग, सम्प्रदाय, क्षमता के आधार पर भेदभाव की भावना खत्म हो। समाज और राज्य हिंसा से मुक्त हों। मौलिक अधिकार सुरक्षित हों और एक जवाबदेह–पारदर्शी–जिम्मेदार मानवीय राज्य व्यवस्था का निर्माण होना।

वरिष्ठ सामाज शास्त्री **प्रोफेसर श्यामाचरण दुबे** कहते हैं कि जीवन की गुणवत्ता को निर्धारित करने में अनेक तरह के कारक सामने आते हैं। यह देखना होगा कि पोषण कितना उपयुक्त है। क्योंकि भोजन की अधिक मात्र की अपेक्षा जरूरी पोषण महत्वपूर्ण है। क्या रहने की जगह पर्याप्त है? आवास कितना बड़ा है। इसकी अपेक्षा यह महत्वपूर्ण है कि क्या वहाँ साफ़–सफाई है। हवादार होने और सूर्य के प्रकाश की सुविधा होने के अधिकतम मापदंड की पूर्ति करता है? न्यूनतम जरूरतों में अब बीमारी से बचाव और उपचार के लिए स्वास्थ्य सेवाएं, शिक्षा की सुविधा का उपलब्ध होना

शामिल है। इसके अतिरिस्क्त स्वस्थ मनोरंजन, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, रोज़गार की उपलब्धता भी विकास के महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं क्योंकि इनसे ही जीवन की गुणवत्ता सुनिश्चित होती है।

इस सोच को सात बिंदुओं में बाँट कर समझा जा सकता है –

1. **जीवन जीने की जरूरतें पूरी होना –** इसमें खाद्य सुरक्षा, पोषण, घर, रोज़गार, स्वास्थ्य, संपत्ति की सुरक्षा, पीने का पानी, शिक्षा जैसी जरूरतें शामिल हैं।

2. **सामाजिक स्तरों का बेहतर होना –** इसमें क्षमता और कौशल का स्तर बढ़ना, समुदायों के बीच आपस में एकजुटता और सम्मान की भावना का बढ़ना, आपसी विवादों को सुलझाने के सामाजिक तरीकों का मज़बूत होना और सामाजिक अनुशासन का स्थापित होना शामिल है।

3. **सामाजिक और मनौवैज्ञानिक जरूरतों का पूरा होना –** इसमें निजी स्वतंत्रता, व्यक्तिगत गोपनीयता, अवकाश और स्वस्थ मनोरंजन, रुचियों और शौक को पूरा करने के अवसर, सामाजिक प्रक्रियाओं में शामिल होने के अवसर शामिल हैं।

4. **सहज बनाने वाले जरूरतें पूरी होना –** इसमें अपने समाज, संस्कृति, सोच, पर्यावरण के बारे में अध्ययन करने, उनमें होने वाले परिवर्तन के कारणों के जानने–समझने और बदलाव के लिए कोई पहल करने की स्वतंत्रता और अवसर मिलना शामिल हैं।

5. **कल्याणकारी और हक आधारित जरूरतें पूरी होना –** समाज के वंचित और उपेक्षित लोगों – विकलांगता से प्रभावित लोगों, वृद्धों, बच्चों, गर्भवती–धात्री महिलाओं समेत सभी लोगों के लिए जन–कल्याणकारी व्यवस्था का बनना और उनके हकों की उपलब्धता सुनिश्चित होना शामिल है।

6. **प्रगति की जरूरतें पूरी होना –** आपदाओं और समस्याओं का पूर्वानुमान लगाने, उनके समाधान की व्यवस्था करने, विवादों को सुलझाने की व्यवस्था बनाने, समाज के हितों के लिए वैज्ञानिक और तकनीकी अनुसंधान को बढ़ावा देने, मानवीय कौशल को विकसित करने के प्रयास शामिल हैं।

6. **राज्य व्यवस्था का पारदर्शी, जवाबदेह और समाज को संरक्षण देने वाला बनना –** विकास के सन्दर्भ में यह एक महत्वपूर्ण पहलू है कि राज्य की व्यवस्था जवाबदेह और पारदर्शी हो। सूचना का अधिकार लागू हो और राज्य अच्छे समाज के मूल्य का संरक्षण करे।

9.4.3 सामाजिक पहल और सामाजिक आन्दोलन – समानताएं और अंतर

सामाजिक, आर्थिक या परिस्थिति के कारण उपजे अभाव की स्थिति में बदलाव के लिए किसी के द्वारा समुदाय या किसी दूसरे व्यक्ति के लिए किया जाने वाला जतन सामाजिक पहल माना जाता है। इसमें एक सोच होती है कि कैसे उस व्यक्ति, परिवार या समुदाय के अभाव को खत्म किया जा सकता है। जब हम अभाव की बात करते हैं, तो इसका मतलब होता है उस समुदाय की तात्कालिक स्थितियां, जब वह अपनी बुनियादी जरूरतें पूरी न कर पा रहा हो या उस समुदाय को बुनियादी जरूरतों से वंचित रखा गया हो।

चित्र 9.4. : स्वाधीनता आंदोलन

अक्सर सामाजिक पहल में यह देखा जाता है कि यह कोशिश समुदाय के किसी बाहरी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह या संस्था द्वारा ही शुरू की जाती है।

एक स्तर के बाद सामाजिक पहल ही सामाजिक आंदोलन का रूप धारण कर लेती हैं।

आधार	सामाजिक पहल	सामाजिक आंदोलन
प्रारम्भ	समाज में एक जागरूक और जीवंत इकाई के रूप में हम समाज में होने वाली घटनाओं और उसकी स्थितियों को केवल देखते ही नहीं हैं, बल्कि उन्हें महसूस भी करते हैं। हम कई बार शांत नहीं बैठते हैं। अच्छी या बुरी, दोनों ही स्थितियों में हम विचार भी करते हैं। जब हमें महसूस होता है स्थितियों को बदलना चाहिए, तब हम मिल–जुल कर एक पहल करते हैं। इस पहल में जब व्यापक समूह जुड़ता है या जुड कर पहल करता है, तब वह सामाजिक पहल के रूप में देखा जाता है। इसमें तात्कालिक सुधार या लाभ का मकसद महत्वपूर्ण होता है। एक संस्थागत ढांचा होता है। एक छोटा समूह इस प्रक्रिया को शुरू करता है और उसका असर वहाँ–वहाँ तक जाता है,	समाज के उन पहलुओं/कारकों को बदलने की कोशिश होती है, जिनके कारण समाज में गैर–बराबरी और गरीबी है। इसमें तात्कालिक जरूरत को पूरा करने के साथ–साथ स्थायी बदलाव की सोच ज्यादा प्रभावी होती है। व्यक्ति मिलकर इसे एक बड़े समूह का रूप देते हैं। इसका असर वहाँ तक भी पंहुच जाता है, जहाँ तक सामाजिक आंदोलन प्रत्यक्ष रूप से खुद न पंहुचा हो। शायद ऐसा इसलिए होता है क्योंकि सामाजिक आंदोलन विकेन्द्रीकृत होते जाते हैं। सामाजिक आंदोलन समुदाय में यह अहसास पैदा करते हैं कि उनमें व्यवस्था को बदलने की ताकत है और वे खुद नेतृत्व कर सकते

	जहाँ–जहाँ तक सामाजिक कार्य करने वाले पंहुचते हैं। इसमें व्यवस्था और कार्यशैली ज्यादातर केंद्रीयकृत होती है।	हैं।
लक्ष्य	समुदाय या उसका हिस्सा सेवा हासिल कर सके – हम अक्सर सुनते हैं कि कुछ शिक्षित नौजवानों को यह अहसास हुआ कि हमारे समाज में कई बच्चे शिक्षा से वंचित हैं, क्योंकि उन्हें मजदूरी करना पड़ती है या कचरा बीनने जाना पड़ता है। ऐसे में उन्होंने तय किया कि वे उस समुदाय के बच्चों के लिए एक स्कूल चलाएंगे, जहाँ वे अपने काम के बाद आकर पढ़ सकें, क्योंकि हमारी मौजूदा शिक्षा व्यवस्था में स्कूलों के खुलने का समय उनकी आवश्यकता के मुताबिक नहीं है। वहाँ उनके साथ भेदभाव ही होता है क्योंकि ये बच्चे कचरा बीनते हैं। उन्हें अस्पृश्य माना जाता है। नौजवानों का वह समूह स्कूल शुरू करता है और फिर कई संस्थाएं उन्हें उस स्कूल को चलाने में मदद करने लगती हैं। इसमें मकसद है कि 50 बच्चों का वह समूह शिक्षा से वंचित न हो और उन्हें शिक्षा का अधिकार मिले ताकि उनकी जिंदगी बदल सके।	जब समुदाय को यह अहसास होता है कि शिक्षा हासिल करना उनके बच्चों का संवैधानिक अधिकार है। यदि उनके साथ भेदभाव होता है तो यह उनके समानता से मौलिक अधिकार का उल्लंघन है। तब वे व्यवस्था में बदलाव के लिए संगठित होते हैं। वे यह मांग नहीं करते कि इस समुदाय के लिए कोई अलग से स्कूल खोला जाए। वे व्यवस्था में ऐसे परिवर्तन की मांग करते हैं, जिसमें भेदभाव न हो। उनके बच्चे उसी स्कूल में शिक्षा हासिल करें, जिसमें अन्य बच्चे पढते हैं। वे केवल अपने बच्चों के लिए संगठित नहीं होते हैं, बल्कि वे एक ज्यादा बड़ा मसला उठाते हैं और सोचते हैं कि केवल उनकी बस्ती की शिक्षा व्यवस्था में ही बदलाव न हो, बल्कि हर स्कूल ऐसा हो जहाँ वंचित तबकों के बच्चों की जरूरत के मुताबिक व्यवस्था हो और भेदभाव न हो।
सोच	अक्सर सामाजिक कार्य एक क्षेत्र या समूह के भलाई को ध्यान में रख शुरू होता है। इसमें जब यह देखा जाता है कि सरकारी स्कूल ठीक से नहीं चल रहे हैं, तो संस्था या कार्यकर्ता कहीं से संसाधन जुटाकर एक नया स्कूल, निजी स्कूल खड़ा कर देते हैं।	यहाँ सोच यह होती है कि शिक्षा बच्चों का संवैधानिक अधिकार है और यह अधिकार देना सरकार की जिम्मेदारी है। अतः कोई निजी या समानांतर ढ़ांचा खड़ा नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि सरकारी व्यवस्था में बदलाव के लिए जुटना चहिये।

दृष्टि	जो समस्या या अभाव सामने दिखाई देता है, उसे बदलने की कोशिश ज्यादा महत्वपूर्ण होती है। इससे एक खास तबके को तात्कालिक लाभ होता है, किन्तु समस्या जड़ों से खत्म नहीं हो पाती है।	जो समस्या या अभाव सामने दिखाई दे रहा है, उसके मूल कारणों को समझते हुए एक जुट होकर संघर्ष / बदलाव की प्रक्रिया शुरू होती है, ताकि समस्या हमेशा के लिए खत्म हो जाए। जब हम किसी भी विषय को एक व्यापक नज़रिए से देखते हैं, तब सामाजिक आंदोलन सबसे बड़ी जरूरत बन जाती है।
नेतृत्व	सामाजिक कार्य अब एक पेशेवर काम माना जाता है। जिसमें व्यक्ति या संस्था एक परियोजना के रूप में एक खास समुदाय के साथ उन्हें लाभान्वित करने के लिए काम करती है। क्या काम होगा और कैसे काम होगा – यह निर्णय अक्सर कोई बाहरी व्यक्ति या संस्था करती है। इसीलिए सामाजिक कार्य से आया बदलाव बहुत गहरा और स्थायी नहीं हो पाता है।	सामाजिक आंदोलन समुदाय की स्थिति, उनके वंचितपन, गैर–बराबरी और गरीबी में स्थायी बदलाव के लिए व्यवस्था में बदलाव की सोच रखते हैं। सामाजिक आंदोलन में नेतृत्व में समुदाय मुख्य भूमिका निभाता है या फिर उसी का नेतृत्व होता है।
दायरा	करुणा केंद्रित सामाजिक कार्य आधारित सामाजिक पहल से जाति और लिंग भेद आधारित व्यवस्था में मूल बदलाव ला पाना कठिन दिखाई देता है। इससे लोगों में यह उम्मीद जरूर जागती है कि उनकी स्थिति बदल सकती है।	सामाजिक आंदोलन वास्तव में जाति, लिंग भेद सरीखे मुद्दों पर खुल कर संघर्ष कर पाते हैं। सामाजिक आंदोलन लोगों की उम्मीदों को संघर्ष की प्रक्रिया में ले जाते हैं।
ढ़ांचा	देखा जाने वाला काम है। जिसमें सामाजिक कार्य करने वालों की श्रेणियाँ तय कर दी गयी हैं। इसके लिए एक खास तरह की पढ़ाई जरूरी मानी जाने लगी है। इसी के आधार पर यह भी तय होता है कि निर्णय कौन लेगा?	जबकि सामाजिक आंदोलन में प्रक्रिया की शुरुआत समुदाय के बीच से ही होती है या उनके द्वारा शुरुआत की जाती है, जो समुदाय को करीब से जानते–पहचानते हैं, इसलिए इसमें महत्वपूर्ण बात होती है कि व्यक्ति और समूह उस समुदाय से कितना

	ज्यादातर काम उस तबके के आसपास सीमित हो जाता है, जिसकी स्थिति हमें बदलना चाहिए हैं, जबकि भेदभाव करने वाले या सत्ता को प्रभावित करने वाले समूह अछूते रह जाते हैं। इससे शक्ति–समीकरण वंचित तबकों के पक्ष में नहीं बदलता है।	जुड़ा है! सामाजिक आंदोलन का एक मुख्य चरित्र यह है कि यह समाज के अलग–अलग समुदायों, जातियों, भिन्न आर्थिक स्तर वाले परिवारों को संघर्ष की प्रक्रिया में शामिल करते हैं। सोच यह है कि बदलाव तो तभी आएगा, जब दूसरे पक्ष को भी बदलाव में शामिल किया जाएगा।
सिद्धांत	मकसद तो यह होता है कि समाज में बराबरी आये और भेदभाव से समाज मुक्त हो। वे सामाजिक न्याय, सहभागिता और संयुक्त जिम्मेदारी के आधार पर व्यवस्था का ताना बाना खड़ा हो। इसके लिए सामाजिक कार्य के जरिये समुदाय के साथ एक प्रक्रिया चलाई जाती है। जिसमें उन्हें जागरूक करने, व्यवस्था से परिचित कराने और अधिकारों को हासिल करने के लिए तय चरणों से अवगत कराने की पहल होती है।	सामाजिक आंदोलन इस मकसद को ज्यादा व्यापक रूप देते हैं, क्योंकि इसमें समाज के बड़े हिस्से को शामिल किया जाता है। अक्सर यह देखा गया है कि सामाजिक कार्य के परिणाम एक सीमित दायरे तक सीमित रह जाते हैं। सामाजिक आंदोलन उस दायरे को बहुत व्यापक करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
विकल्प खड़ा करना /रचनात्मकता	जब हम यह कहते हैं कि मौजूदा शिक्षा या स्वास्थ्य की व्यवस्था में गडबडियां हैं, तब अक्सर यह सवाल पूछा जाता है कि तो फिर विकल्प क्या है? सामाजिक पहल में ऐसे विकल्प खड़े करने की कोशिश की जाती है ताकि यह साबित किया जा सके कि स्कूल और अस्पताल भेदभाव से मुक्त और गुणवत्ता से युक्त हो सकते हैं।	अक्सर इन विकल्पों को सरकार या व्यवस्था यह तो अपनाती नहीं है या अपनाती है तो प्रतिबद्धता न होने के कारण लागू करने में असफल हो जाती है। तब सामाजिक आंदोलन सरकार या सम्बंधित समूह पर यह दबाव बनाते हैं कि इन विकल्पों को सही ढंग से लागू किया जाए।
संघर्ष	सामाजिक पहल में सरकार को कोई निर्णय लेने से बाध्य करने के लिए जो पहल होती है, उसमें ज्यादातर सरकार से संवाद होता रहता है। और	तब सामाजिक आंदोलन संघर्ष की भूमिका लेते हैं, ताकि उस विषय को सबके सामने लाया जाए। व्यापक समाज को उसके बारे

	हो सकता है कि एक स्तर के बाद वह निर्णय न हो। एक तरह से तब प्रक्रिया रुक जाती है।	में बताया जाए और सरकार पर इसके लिए दबाव बने।
रणनीतियाँ	क दायरे में किसी काम को साबित करना या बदलाव लाना। समाज की तुलना में छोटे समूह के साथ काम करना। शोध और अध्ययन कौशल से सम्बंधित प्रशिक्षण तुलनात्मक रूप से सरकार के साथ ज्यादा संवाद	एक व्यापक बदलाव के लिए व्यापक दायरे में काम करना। बड़ा समूह लक्ष्य के रूप में चुनना। शोध और अध्ययन लोक शिक्षा – सम्मेलन समुदाय का नजरिया विकसित करने के लिए प्रशिक्षण मीडिया, जनप्रतिनिधियों, स्थानीय निकायों, सरकार और सामुदायिक संगठनों के साथ ज्यादा संवाद
व्यवस्था की सोच	आजकल यह सोच बहुत प्रभावी है कि जो संस्थाएं स्वास्थ्य केंद्र, स्कूल, सिलाई प्रशिक्षण केंद्र चला रही हैं, लोगों में कम्बल और कपड़े बाँट रही हैं, युवाओं को कौशल प्रशिक्षण दे रही हैं; वे संस्थाएं ही सामाजिक कार्य करने वाली संस्थाएं हैं।	सामाजिक आंदोलन में समुदाय के साथ–साथ ही कई सामाजिक संस्थाएं जुड़ती हैं; किन्तु उन्हें नकारात्मक नज़रिए से देखा जाता है। यह माना जाता है कि वे समाज या सरकार विरोधी हैं; किन्तु वास्तव में ऐसा होता नहीं है।
प्रभाव	सामाजिक कार्य के तहत विकास और सामाजिक बदलाव के कई विकल्प भी खड़े किये गए हैं। इस सन्दर्भ में हमें यह देखना होगा कि यह कैसे हुआ? जब सामाजिक कार्य करने वाली संस्थाओं ने तीन स्तरों पर काम किया, तब एक ठोस प्रक्रिया शुरू होती है – **पहला स्तर** – लोगों की समस्याओं को पहचानना; जैसे कि गरीबी, योजनाओं का उन तक न पंहुचना, उनकी शिकायतों का निराकरण न होना, अभिव्यक्ति का अधिकार न मिलना,	समाज के मुद्दों की समझ और काम के ये तीनों स्तर सामाजिक आंदोलन के लिए एक पृष्ठभूमि भी तैयार करते हैं। समाज जब कुछ व्यापक मूल्यों के पक्ष में खड़ा होता है, तब सामाजिक आंदोलन खड़े होते है। जैसे – समाज जब हिंसा के खिलाफ हुआ, तब युद्धों के खिलाफ सामाजिक आंदोलन हुए। दुनिया के कई देशों में जब राजशाही या तानाशाही व्यवस्था ने रूप लिया, तब लोकतंत्र के लिए

	समाज और सरकारी व्यवस्था में उनके साथ भेदभाव होना आदि। **दूसरा स्तर** – उनकी आजीविका के अधिकार, सांस्कृतिक पहचान, शिक्षा, स्वास्थ्य, घर, भाषा के अधिकार को समझना और उन मुद्दों को महत्वपूर्ण बनाना। **तीसरा स्तर** – प्राकृतिक संसाधनों पर समुदाय के अधिकार, जैव–विविधता की सुरक्षा के सवालों को सामने लाना।	सामाजिक आंदोलन हुए, जब नए आर्थिक विकास की नीतियों से बेरोज़गारी बढ़ने लगी, तब उन नीतियों के खिलाफ सामाजिक आंदोलन हुए। इसी तरह हम देखते हैं कि भारत में भी विकास परियोजनाओं से प्रभावित समुदायों के सही पुनर्वास के लिए आंदोलन चले। उत्तराखंड में जब आर्थिक विकास के लिए पेड़ों को काटा जाने लगा, तब वहाँ स्थानीय समुदाय नें पेड़ों से चिपक कर उनकी रक्षा की। जिसे चिपको आंदोलन के रूप में जाना जाता है।

9.4.4 सामुदायिक सहभागिता – परिभाषा और अर्थ

सामुदायिक सहभागिता का अर्थ किसी लक्ष्य, गतिविधि या प्रयासों में समूह की भागीदारी से है। सामुदायिक सहभागिता मिल–जुलकर किसी गतिविधि को पूर्णता प्रदान करने के साझा प्रयासों का नाम है। सामुदायिक सहभागिता की शास्त्रीय परिभाषा से हम अवगत हों या न हों हम इसके बोल–चाल का अर्थ समझ सकते हैं। आइये सामुदायिक विकास में सामुदायिक सहभागिता को विस्तार से समझने का प्रयास करें।

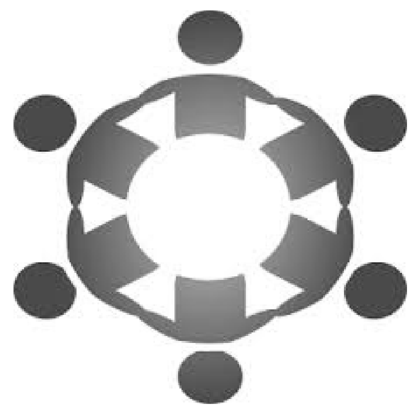

चित्र 9.4. : सामुदायिक विकास

सामुदायिक विकास में सामुदायिक सहभागिता

- हमें यह खुद तय करना है कि हमारे समुदाय, समाज, गांव और प्रदेश के लिए क्या बेहतर है? सच पूछिए तो विकास में समुदाय की सहभागिता का मतलब है कि वह खुद विकास का मतलब बताए। इसके लिए कोई बहुत गूढ़ सिद्धांतों की बात करने की जरूरत नहीं है।
- विकास में समुदाय की सहभागिता कोई एक बार होने वाली गतिविधि नहीं है।
- यह तो एक प्रक्रिया है, जिसमें जब समुदाय सक्रिय होता है, तब वह अपने विकास और बेहतरी के बारे में सोचता है।

- वह कुछ लक्ष्य तय करता है। उन लक्ष्यों को हासिल करने के लिए मिल–जुल कर कोशिश करता है।
- जब वह विकास और समस्याओं पर खुलकर बात करता है, तब वह और ज्यादा सक्रिय होता है।
- वास्तव में समुदाय के विकास में सहभागिता का मतलब है विकास की प्रक्रिया में अग्रणी भूमिका और जिम्मेदारी लेना। जब हम अपने लिए कोई निर्णय लेते हैं, अपना अच्छा–बुरा खुद सोचते हैं और उसके मुताबिक कुछ बेहतर करने की योजना बनाते हैं, तब उसके परिणामों की जिम्मेदारी भी खुद ही लेते हैं।

आइये! सामुदायिक सहभागिता को निम्नांकित शीर्षकों के अन्तर्गत गहराई से समझने का प्रयत्न करते हैं।

मकसद

विकास में समुदाय के सहभागिता का मकसद है कि हम अपने समुदाय की बेहतरी के लिए और बड़ी समस्याओं का समाधान हासिल करने के लिए मिलकर एक रूपरेखा बना सकें। इस प्रक्रिया से जो लक्ष्य तय होंगे और योजना बनेगी, वह हमें, यानी समुदाय की अपनी योजना होगी। वह किसी बाहर की संस्था या समूह के द्वारा बना कर नहीं दी जायेगी।

सिद्धांत

विकास में समुदाय के सहभागिता का सिद्धांत यह है कि मिलकर रूपरेखा बनाई जाये। इसका मतलब है कि समुदाय के भीतर लिंग, जाति, उम्र, आर्थिक सम्पन्नता, धार्मिक समूह/सम्प्रदाय, विकलांगता जैसे कुछ पहलुओं पर नज़र रखी जाये। ताकि इन आधारों पर इस वर्ग, व्यक्ति या परिवार प्रक्रिया से बाहर न हो जाए। दूसरा मतलब है कि मिलकर लोग अपनी ताकत, कमजोरियों और उपलब्ध संसाधनों का खुलकर आंकलन करें।

पहलू

समुदाय के विकास के लिए समुदाय के द्वारा योजना बनाने की प्रक्रिया के 9 महत्वपूर्ण पहलू हैं –

1. **जिम्मेदारी और जवाबदेही** – जब समुदाय खुद निर्णय लेता है और तय करता है कि विकास के लिए क्या–क्या किये जाने की जरूरत है, तब उस निर्णय को लागू करने और उससे आने वाले हर तरह के बदलाव की जिम्मेदारी लेने के लिए उसे तैयार रहना होगा।
2. **अपने विकास का मतलब** – इस सवाल का जवाब खोजना है कि समुदाय विशेष/गांव के समूह के लिए विकास का मतलब क्या है?
3. **बदलाव** – ऐसी कौन सी स्थिति/स्थितियाँ हैं, जिसे समुदाय बदलना चाहता है?

4. **सहमति** – समुदाय के ज्यादातर लोग विकास और बदलाव के बारे में क्या सोचते हैं? उनकी सोच में कितनी समानता या साम्य है।

5. **कारण** – यह जानना कि यदि कोई समस्याएं हैं, तो उनके कारण क्या हैं?

6. **भूमिका और स्तर** – जब समुदाय विकास की योजना बनाता है या समस्याओं के समाधान के लिए कोई पहल करता है, तब यह भी पता चलता है कि कुछ काम ऐसे हैं, जो जिला प्रशासन या सरकार के स्तर पर ही हल हो सकते हैं। ऐसे में प्रत्येक स्तर पर भूमिका और जिम्मेदारी का निर्धारण आवश्यक है।

7. **संगठित प्रयास** – जब समुदाय समस्या के कारणों को पहचान लेता है या विकास का एक लक्ष्य तय कर लेता है, तब यह सुनिश्चित करना जरूरी होता है कि हल खोजने या योजना बनाने–उसे क्रियान्वित करने का काम कोई एक व्यक्ति या कुछ व्यक्ति अपने हाथ में केंद्रित न कर लें। यहाँ संगठित और मिले–जुले प्रयासों की जरूरत होती है।

8. **पहल** – अब जो बातें हमारे सामने हैं, उनके आधार पर एक पहल करना; क्या इसके लिए समुदाय तैयार है?

9. **बदलाव की तैयारी** – जब समुदाय इस प्रक्रिया में सक्रिय होता है, तब उसे लगेगा कि गांव और समाज के विकास के लिए कुछ नीतियों में बदलाव होना चाहिए या फिर नीतियां–योजनाएं तो हैं, उनके क्रियान्वयन में बहुत समस्याएं हैं, तब वह नीतियों और उनके क्रियान्वयन की तौर–तरीकों में बदलाव की आवाज़ भी उठाएगा।

9.4.5 सामुदायिक सहभागिता और सामाजिक अंकेक्षण

मानव समाज के उद्भव और विकास के बारे में पिछली इकाईयों के अध्ययन से हमें यह तो पता चल ही जाता है कि समुदाय में कुछ तबके ज्यादा ताकतवर बन जाते हैं। अपनी ताकत बनाये रखने के लिए वे समुदाय के अन्य बहुत से तबकों या लोगों को व्यवस्था से बाहर रखने का जतन करते रहते हैं। व्यवस्था से बाहर के लोगों को यह पता नहीं चल पाता है कि समुदाय और सरकार के भीतर क्या चल रहा है? संसाधनों का उपयोग कैसे हो रहा है? निर्णय कैसे और किसके हित में लिए जा रहे हैं? असमानता को बनाये रखने के लिए समुदाय के ज्यादातर लोगों या कुछ समुदायों को जानकारी नहीं दी जाती है।

जब हम यह सोचते हैं कि गैर–बराबरी वाली यह व्यवस्था किस तरह बदल सकती है? तब हमारे सामने एक विकल्प आता है– समुदाय विकास में सहभागिता सुनिश्चित करने का। समुदाय को यह जानने का हक देने का कि गांव में, बस्ती में, सरकार में व्यवस्था कैसे काम कर रही है? आर्थिक संसाधनों का उपयोग कैसे हो रहा है? वास्तव में ऐसी व्यवस्था बनाने का जिसमें लोग सारी बातें जान भी सकें और सवाल भी पूछ सकें। इसका एक तरीका है – सामाजिक अंकेक्षण।

सामाजिक अंकेक्षण की नीति को सही रूप में लागू किया जाए तो समुदाय के भीतर सत्ता संबंधों में बदलाव लाने में मदद मिल सकती है और लोगों का व्यवस्था में विश्वास भी बढ़ेगा।

हमने सामुदायिक विकास, सामुदायिक सहभागिता और सामुदायिक संगठित पहल के बारे में विस्तार से बात की है। अब यह सवाल आता है कि हमारी शासन व्यवस्था में इस तरह की सोच के लिए कोई जगह है? उत्तर है– हाँ। भारत में वर्ष 2005 में **सूचना का अधिकार क़ानून** बनाया गया। इसका मकसद यह था कि सरकार से जुड़े हुए संस्थानों और विभागों की कामों, उनके बजट, खर्चों और उनकी जिम्मेदारियों के बारे में आम लोग या समुदाय जानकारी पा सकें। यह एक स्थापित सच है कि जब समुदाय और व्यवस्था एक दूसरे पर नज़र रखते हैं, तब उनका व्यवहार ज्यादा जिम्मेदार और जवाबदेह होता है। सूचना के अधिकार के क़ानून ने लोगों को सरकार से जानकारी पाने का हक दिया।

इसके बाद **राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी क़ानून** आया। इस क़ानून में एक तरफ तो गांव में रहने वाले परिवारों को मांग करने पर सालभर में 100 दिन के रोज़गार का हक दिया गया है तो वहीं दूसरी और इस क़ानून के तहत बने दिशा–निर्देश इस योजना के सामाजिक अंकेक्षण की व्यवस्था खड़ी करते हैं। मतलब यह कि हर साल राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना के तहत पंचायत को कितना बजट मिला। कितने लोगों को जॉब कार्ड मिला। किनको नहीं मिला। किन लोगों को मजदूरी मिली और कितनी मजदूरी मिली। गांव में कौन से काम हुये या होंगे। यह कैसे तय हुआ आदि–आदि के बारे में ग्रामसभा में जानकारी दी जायेगी और उस पर चर्चा भी हो सकती है और बहस भी।

चित्र 9.4. : सामुदायिक सहभागिता एवं संगठित पहल

इसके बाद वर्ष 2013 में बने **राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा क़ानून** में भी सामाजिक अंकेक्षण का प्रावधान किया गया। कुल मिलकर सामाजिक अंकेक्षण का मतलब यह है कि सरकार खुद एक व्यवस्था के तहत समुदाय को उसके हकों और जरूरी सेवाओं से सम्बंधित जानकारी दे और उनकी शंकाओं का समाधान करे। हम जानते हैं कि सरकार नियमों से चलती है। सामाजिक अंकेक्षण में समुदाय यह जाँचता है कि वास्तव में उन नियमों का पालन किया गया अथवा नहीं। सामुदायिक विकास, सामुदायिक सहभागिता और सामुदायिक संगठित पहल को व्यवहार में लागू किया जा सकता है–सामाजिक अंकेक्षण के जरिये।

सामाजिक अंकेक्षण क्या है?

चित्र : 9.4.1 सामाजिक अंकेक्षण अर्थात गहन छान–बीन

सामाजिक अंकेक्षण एक नजरिया और दृष्टि आधारित काम करने का तरीका है। इसके तहत कुछ तरीकों (जैसे – लोगों को यह विश्वास दिलाना कि कार्यक्रम या योजना में उनकी भूमिका है, उनके साथ बातचीत करना और पंचायत–सरकारी कार्यालयों के दरवाज़े खुले रखना) और तकनीकों (सहभागिता, जानकारी को खुले में रखना, आंकड़ों का मतलब साफ़ करना, कार्यक्रम या किसी योजना का उसके मानकों के मुताबिक क्रियान्वयन जाँचना आदि) के जरिये किसी योजना या कार्यक्रम (यहाँ जैसे राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा क़ानून में शामिल सार्वजनिक वितरण प्रणाली, एकीकृत बाल विकास कार्यक्रम, मध्यान्ह भोजन योजना, मातृत्व हक, कृषि क्षेत्र के तहत भोजन उत्पादन की नीति और व्यवस्था) के बारे में लोगों की जानकारी स्पष्ट की जाती है, ताकि समुदाय यह जान सके कि–

- योजना या क़ानून के मुताबिक क्या हक दिए जाने थे। वे दिए गए या नहीं।
- जिसकी जो जिम्मेदारी थी। उसका सही ढंग से निर्वहन किया गया या नहीं।

फिर वह यह मूल्यांकन करता है कि वह कार्यक्रम या योजना उसकी मंशा के मुताबिक लागू/क्रियान्वित हुई या नहीं? इस क़ानून का मकसद समाज में भुखमरी और खाद्य सुरक्षा की स्थिति को बदलना है। इस क़ानून के लागू होने से उनकी स्थिति बदली या नहीं और यदि बदली तो कितनी; इन सवालों का जवाब तो समाज ही दे सकता है। इसीलिए सामाजिक अंकेक्षण का मतलब है कि समाज योजना/कार्यक्रम के परिणामों को जाँचे। इससे सरकार या कार्यक्रम लागू करने वाली संस्था की जवाबदेही सुनिश्चित करने की कोशिश की जाती है।

सामाजिक अंकेक्षण कुछ खास नजरियों से व्यवस्था में बदलाव के लिए हमें जमीनी ज्ञान दे सकता है। इससे हमें पता चल सकता है कि – आंगनवाड़ी केंद्र में लड़के और लड़कियों को सामान अवसर/महत्त्व/सेवाएं देने के लिए क्या कोशिशें की गयी हैं? वहां भोजन पकाने वाले स्थान कितने सुरक्षित और साफ़–सुथरे हैं? पोषण आहार के वितरण में समानता और सहृदयता हो, इसके लिए क्या प्रयास किये गए? पोषण आहार कार्यक्रम या जो सेवाएं मिल रही हैं, उनके बारे में बच्चों और महिलाओं के विचार लिए जाते हैं क्या? क्या इससे जाति और लैंगिक आधार पर बनी सामाजिक व्यवस्था में भी बदलाव आ रहा है?

9.4.6 सामाजिक अंकेक्षण का सामाजिक बदलाव में महत्व

चित्र 9.4. : सामाजिक बदलाव

सामाजिक अंकेक्षण एक बहुत उपयोगी साधन हो सकता है, बशर्ते क़ानून के तहत परिभाषित हकदार या कोई और भी व्यक्ति यह तय कर लें कि उन्हे हर योजना की निगरानी करना है। सवाल–जवाब करना है। जानकारी इकठ्ठा करना है और कानूनी प्रावधानों का उपयोग करना है। सामाजिक अंकेक्षण के लिए हमें न केवल योजना और क़ानून को पूरी तरह से समझना है, बल्कि अपनी ग्रामसभा/वार्ड सभा में सक्रिय प्रशिक्षित सामाजिक अंकेक्षण कार्यकर्ताओं का समूह भी तैयार करना है। इसके बाद जहाँ भी गड़बड़ियाँ मिलें, वहां उनके सुधार के लिए संघर्ष भी करना होगा।

सामाजिक संकेक्षण एक लोकतान्त्रिक प्रक्रिया है, जिसमे सरकार और समाज मिलकर एक कार्यक्रम और व्यवस्था की निगरानी करते हैं और कोशिश करते हैं कि तय लक्ष्य हासिल हों। यह वंचित तबकों के सशक्तिकरण का एक प्रभावशाली माध्यम भी है।

सामाजिक अंकेक्षण क्यों महत्वपूर्ण है?

हमें समझना होगा कि वैधानिक व्यवस्था के तहत भी आडिट किया जाता है। वह आडिट या अंकेक्षण वाणिज्य और वित्तीय नियमों के तहत निर्धारित व्यवस्था के मानकों पर होता है। उसमें समुदाय या हकधारकों या हितग्राहियों की कोई सहभागिता नहीं होती है।

सामाजिक अंकेक्षण में सबसे बुनियादी बात यह है कि इसमे समुदाय/या हकधारकों की पूरी सहभागिता होती है। वे ही सूचना के सबसे बुनियादी और विश्वसनीय स्रोत होते हैं जो ये बता सकते हैं कि उन्हे क़ानून के तहत लिखे गए अधिकार मिले या नहीं। सुविधाएं मिली या नहीं।

दूसरी बात यह है कि जब सरकार या सरकार के प्रतिनिधि सामाजिक अंकेक्षण के तहत दस्तावेज और जानकारियाँ ग्राम सभा या वार्ड सभा के सामने पेश करेंगे, तो इससे समुदाय भी सवाल पूछने के लिए सशक्त होगा। यह एक ऐसा अवसर हो सकता है जहाँ सरकार और समुदाय बराबरी से संवाद कर सकते हैं। यहाँ सरकार और समुदाय के सम्बन्ध देने वाले और लेने वाले के नहीं हैं।

व्यक्तिगत शिकायतों, गांव या शहरों की बसाहटों से निकलकर आये मुद्दों या समस्याओं का संज्ञान लेने के लिए सरकार बाध्य होगी। इससे नीतियों और उसके क्रियान्वयन में व्याप्त विसंगतियों को दूर किया जा सकेगा। क़ानून और नीति बनाने वालों को पता चलेगा कि क़ानून का क्रियान्वयन किस ढंग से हो रहा है।

सामाजिक अंकेक्षण से प्रचलित मान्यताएं जाँची जा सकती हैं। आमतौर पर यह कह दिया जाता है कि कहीं कुछ नहीं हो रहा है, किसी को कोई अधिकार नहीं मिले हैं या सब कुछ ठीक चल रहा है। कहीं कोई शिकायत नहीं है। सामाजिक अंकेक्षण से इन मान्यताओं का परीक्षण किया जा सकता है।

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा क़ानून (सार्वजनिक वितरण प्रणाली, मध्यान्ह भोजन योजना, आंगनवाड़ी, मातृत्व हक) **महात्मा गांधी ग्रामीण रोज़गार गारंटी कानून** और इसकी योजनाओं के सामाजिक अंकेक्षण के मकसद क्या हैं?

सामाजिक अंकेक्षण या संपरीक्षा के मुख्य मकसद हैं –

- क़ानून/योजना के क्रियान्वयन की प्रक्रिया में समाज/हकदारों की सक्रिय सहभागिता सुनिश्चित करना।
- यह सुनिश्चित करना कि जो मंशा क़ानून में व्यक्त की गयी है, उसके मुताबिक क्रियान्वयन हो रहा है अथवा नहीं?
- इस क़ानून/कार्यक्रम को सही ढंग से संचालित करने के लिए जिस तरह की व्यवस्था और ढांचे की जरूरत है; वह स्थापित किया गया है अथवा नहीं?
- यह देखना कि सामाजिक/आर्थिक रूप से वंचित तबकों की इसमे सम्मानजनक सहभागिता है अथवा नहीं।
- महिलाओं, बेघर, खाना–बदोश और घुमंतू समुदायों, विकलांगता से प्रभावित, अनुसूचित जाति–जनजाति, गंभीर बीमारियों से प्रभावित, पेशों के आधार पर बहिष्कृत तबकों को उनके हक मिल रहे हैं और उनकी स्थिति में बेहतरी हो रही है या नहीं।
- क़ानून के गुणवत्तापूर्ण क्रियान्वयन की प्रक्रिया में कोई विसंगति/भ्रष्टाचार तो नहीं है।
- कार्यक्रम और बेहतर किस तरह से हो सकता है; इसके लिए जमीनी बाते सामने आ सकें।
- शिकायत निवारण व्यवस्था अपना काम जिम्मेदारी से कर रही है अथवा नहीं।
- नीति में यदि कोई कमी है, तो अनुभव के आधार पर उसे दूर किया जा सके।
- यह प्रक्रिया निष्पक्ष और पारदर्शी ढंग से संचालित होना चाहिए।

हमने जाना

- सामुदायिक विकास की अनिवार्य शर्त है–सामुदायिक सहभागिता। सामुदायिक सहभागिता का बुनियादी अर्थ है–समुदाय के लिए संचालित कार्यक्रमों में समूह की सक्रिय और जवाबदेह सहभागिता।
- विकास मानव की केवल भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति से संबंधित नहीं है अपितु वह व्यक्ति की सामाजिक दशाओं से भी संबंध रखता है। विकास का मतलब केवल आर्थिक वृद्धि ही नहीं है बल्कि इसमें सामाजिक, सांस्कृतिक, संस्थागत और आर्थिक परिवर्तन भी शामिल हैं।
- श्रेष्ठ विकास वह है जहाँ समुदाय खुद अपनी जरूरतें तय करता है, उसके लिये खुद योजनाएं बनाता है और उन्हें लागू करने की जिम्मेदारी भी निभाता है।
- विकास के मायने हैं – 'जीवन जीने की जरूरतों का पूरा होना, सामाजिक स्तरों का बेहतर होना, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक जरूरतों का पूरा होना, सहज बनाने वाली जरूरतें पूरी होना, कल्याणकारी और हक आधारित जरूरतें पूरी होना, परिवर्तन और प्रगति की जरूरतें पूरी होना, राज्य व्यवस्था का पारदर्शी, जवाबदेह और समाज को संरक्षण देने वाला स्वरूप होना।
- सामाजिक, आर्थिक या अन्य परिस्थितियों के कारण उपजे अभाव या विसंगति की स्थिति में बदलाव के लिये किसी समुदाय द्वारा किया गया जतन सामाजिक पहल माना जाता है। एक स्तर के बाद निरन्तरता, सक्रियता और सहभागिता के कुछ मानकों के आधार पर सामाजिक पहल ही सामाजिक आन्दोलनों का रूप ले लेती है।
- सामुदायिक अंकेक्षण का मतलब है कि किसी योजना या कार्यक्रम का क्रियान्वयन ठीक तरीके से हो रहा है या नहीं, इसे जाँचने और सवाल उठाने में समुदाय की भागीदारी।

कठिन शब्दों के अर्थ

- सामाजिक पहल : सामाजिक, आथिर्क परिस्थितियों के कारण उपजे अभाव की स्थिति में बदलाव के लिए किसी के द्वारा समुदाय या किसी दूसरे व्यक्ति के लिए किया जाने वाला जतन सामाजिक पहल माना जाता है।
- सामाजिक अंकेक्षण : सामाजिक संकेक्षण एक लोकतान्त्रिक प्रक्रिया है, जिसमे सरकार और समाज मिलकर एक कार्यक्रम और व्यवस्था की निगरानी करते हैं और कोशिश करते हैं कि तय लक्ष्य हासिल हों। यह वंचित तबकों के सशक्तिकरण का एक प्रभावशाली माध्यम भी है।

अभ्यास के प्रश्न

- सामुदायिक विकास की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए। अपने आस–पास की परिस्थितियों के आधार पर उदाहरण भी दीजिए।
- विकास की सोच को इकाई के अध्ययन के आधार पर स्पष्ट कर लिखिये।
- सामाजिक पहल और सामाजिक आन्दोलन की समानताएं एवं असमानताएं स्पष्ट कीजिए। इसे एक प्रभावी उदाहरण से भी समझाइये।
- सामुदायिक सहभागिता की अवधारणा और स्वरूप को समझाइये।
- सामाजिक अंकेक्षण क्या है? योजनाओं और कार्यक्रमों के प्रभावी क्रियान्वयन में इसकी क्या भूमिका है?

आओ करके देखें

"विकास" यह शब्द आपने जरूर सुना होगा। क्या आपने सोचा है कि "विकास" शब्द का अर्थ क्या हो सकता है? इस शब्द को आप और कैसे परिभाषित कर सकते हैं?

क्या आपके गांव/बस्ती/शहर/समुदाय और उनके परिवार का कोई "विकास" हुआ है? यदि हुआ है, तो वे उसे कैसे मापेंगे?

क्या इस विकास से कोई चुनौतियां या समस्याएं भी खड़ी हुई हैं?

सामुदायिक सहभागिता से सम्बंधित इकाई पर चर्चा शुरू करने के लिए आप एक बार विचार करें कि इन दो शब्दों – सामुदायिक और सहभागिता के अर्थ क्या हैं?

हो सकता है कि आप कोई परिभाषा न दें, किन्तु हमें अर्थ खोजना चाहिए। क्या आपको लगता है कि वास्तव में विकास में या और दूसरी निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में समुदाय की सहभागिता होना चहिये?

यदि हाँ तो क्यों? इन बिंदुओं को आप आपनी कापी में लिख लें।

अगला सवाल यह कि यदि समुदाय की विकास की प्रक्रिया में सहभागिता होने लगेगी, तो इससे क्या बदलाव आएगा?

अब हमने एक प्रायोगिक गतिविधि करना है। इसके तहत हमें यह जानना है कि विकास के किसी कार्यक्रम में या कोई निर्णय लेने की प्रक्रिया में समुदाय को सहभागी कैसे बनाया जाएगा? और इस काम में सबसे बड़ी चुनौतियां कौन सी होंगी?

अब थोड़ा समय निकाल कर इस रूप में तैयारी कीजिये और योजना बनाईये कि

- आप समुदाय को एकजुट क्यों और कैसे करेंगे?
- लक्ष्य/समस्या की पहचान कैसे करेंगे?
- अपने अनुभव के आधार पर बताईये कि विकास में समुदाय की सहभागिता को सुनिश्चित करने की प्रक्रिया में आपको किनसे सबसे ज्यादा मदद मिल सकती है और क्यों?
- अपने अनुभव के आधार पर बताईये कि विकास में समुदाय की सहभागिता को सुनिश्चित करने की प्रक्रिया में आपको किन समस्याओं या चुनौतियों का सामना करना पड़ेगा?
- उन समस्याओं या चुनौतियों से आप कैसे निपटेंगे?

सभी चार समूह अपनी चर्चा और उसके निष्कर्षों का प्रस्तुतीकरण करें। स्रोत व्यक्ति जहाँ जरूरत हो, वहाँ अपनी बात जोड़ते जाएँ।

एक (सामुदायिक सहभागिता का काम)

उद्देश्य – अब हम प्रायोगिक गतिविधि करेंगे। इसका उद्देश्य है कि हम सामुदायिक सहभागिता की प्रक्रिया के कुछ महत्वपूर्ण चरणों को समझ सकें।

सामग्री – फ्लिप चार्ट और मार्कर

पूर्व तैयारी

1. एक फ्लिप चार्ट पर हम निम्न 7 चरण लिख लेंगे –

   i. एक साथ आना
   ii. विकास का मतलब और जरूरत को पहचानना
   iii. सबसे महत्वपूर्ण प्राथमिकता और उसके बाद की प्राथमिकताएं तय करना
   iv. लक्ष्य तय करना?
   v. यह तय करना कि तय लक्ष्य को हासिल करने के लिए क्या करना होगा?
   vi. मिलकर समीक्षा और मूल्यांकन करें
   vii. सीखों को समेटें और उनके आधार पर विकास की सहभागी प्रक्रिया को मज़बूत बनायें।

2. फिलप चार्ट पर लिखे इन सभी 7 चरणों के बारे में एक–एक करके प्रतिभागियों से बात करें। उनसे पूछें कि उनके हिसाब से इन चरणों का मतलब क्या है और इनमें कौन–कौन सी बातें शामिल होती हैं। प्रतिभागियों के द्वारा कही गयी बातें को चार्ट पर लिखते जाएँ। जब वे अपनी बात कहें, तब यह भी देखें कि यदि किसी बिंदु पर कोई महत्वपूर्ण बात आ रही है, तो उसका विशेष उल्लेख करें।

3. सभी प्रतिभागियों से बात करने के बाद प्रशिक्षक इन सात बिंदुओं की संक्षेप में व्याख्या करेंगे। उस व्याख्या में मुख्यतः निम्न बिंदु शामिल होंगे।

i. **एक साथ आना** • सबसे पहली पहल तो यही होगी कि लोग एक साथ आयें। • बातचीत और संवाद से आपसी विश्वास बढ़ाएँ और यह दोहराते रहना होगा कि इस प्रक्रिया का नेतृत्व उनके ही हाथ में होगा। • समुदाय की सहभागिता के प्रति सजग रहें। कई बार हो सकता है कि बात आगे न बढ़ रही हो, तब कार्यकर्ता जल्दी प्रक्रिया को आगे बढाने के लिए, खुद समस्या बताने लगते हैं और उसका समाधान कैसे–कैसे होगा यह भी; इससे कोई सहभागिता न होगी। • एक साथ आने का मतलब है उनका भी साथ आना, जो समुदाय में सबसे वंचित हैं और जो समस्या से सबसे ज्यादा प्रभावित हैं। • नज़र रखना होगी कि सामाजिक भेदभाव या आर्थिक–राजनीतिक असमानता के चलते कोई वर्ग यह प्रक्रिया न छोड़े या छोड़ने के लिए मजबूर हो।	i. **विकास का मतलब और जरूरत को पहचानना** • यह एक झटके में होने वाला काम नहीं है। इसे दो रूपों में समझने की कोशिश करना होगी – एकः समुदाय अपने गांव/बसाहट को किस रूप में देखता है? और वह इसे किस रूप में बेहतर बनाना चाहता है; दोः क्या समुदाय के सामने कोई बड़ी समस्या खड़ी है? जिससे उनके जीवन पर गहरा असर पड़ रहा है। • विकास में समुदाय की सहभागिता का एक महत्त्व इसलिए भी है क्योंकि समुदाय ही यह बेहतर जानता है कि समाज में सबसे वंचित और जरूरतमंद परिवार/समुदाय कौन सा है, जिसके जीवन में इस प्रक्रिया से बदलाव आना चाहिए! • वास्तव में एक बड़ा लक्ष्य हासिल करने के लिए, प्रक्रिया का खुला और पारदर्शी होना भी जरूरी है। इसके लिए हम पंचायतों और सरकारी व्यवस्था में सूचना के अधिकार और पारदर्शिता की वकालत करें। सभी को उपलब्ध संसाधनों और उनके खर्चों के बारे में पता होना चाहिए।

• यह ध्यान रखें कि इसमें कुछ लोगों या किसी खास समूह के निजी हित हो सकते हैं, इसलिए वे प्रक्रिया को प्रभावित कर सकते हैं। • समुदाय विकास की जरूरत और प्राथमिकता से जुड़े सभी पहलुओं पर चर्चा, बहस और संवाद होता रहे।	
iii. सबसे महत्वपूर्ण प्राथमिकता और उसके बाद की प्राथमिकताएं तय करना • हो सकता है कि विकास पर खुली बहस करते समय कई अपेक्षाएं सामने आ जाएँ। इससे लोगों की उम्मीदें भी बढ़ती जायेंगी। ऐसे में जरूरी है कि सबसे महत्वपूर्ण काम कौन सा है, यह तय कर लिया जाए। प्राथमिकता की सूची में सबसे महत्वपूर्ण कामों को ज्यादा तवज्जो दी जाना होगी; किन्तु साथ ही यह भी ध्यान रखना होगा कि सबसे बड़े काम को करने के लिए कुछ छोटे–छोटे कामों से जमीन तैयार करना होगी। जैसे यदि लोग चाहते हैं कि गांव की खेती में रासायनिक कीटनाशकों–उर्वरकों से कहती न हो; किन्तु हो सकता है कि इसे तत्काल बंद नहीं किया जा सके। इसके लिए एक बार फिर से समुदाय को खेती की उन तकनीकों को इकठ्ठा करना होगा, जिनमें रसायनों का उपयोग नहीं होता है/था। इसके लिए स्थानीय बीजों की जरूरत होगी, हो सकता है कि उतनी मात्रा में वे बीज बचे ही न हों। हो सकता है कि आधुनिक खेती की तकनीक	**iv. लक्ष्य तय करना?** • विकास का मतलब जानते समय यह पता चला होगा कि आखिर समुदाय किस स्थिति को हासिल करना चाहता है? हम मानते हैं कि समाज से लैंगिक, जातिगत या विकलांगता के आधार पर किये जाने वाले भेदभाव न हों। आर्थिक–सामाजिक गैर–बराबरी न हो। • संसाधनों या अवसरों पर किसी एक व्यक्ति, परिवार या वर्ग का एकाधिकार न हो। • इसके साथ ही यह व्याख्या करना कि इस लक्ष्य को हासिल करने से क्या बदलाव आएगा और किनके लिए? • जिस विकास की हम बात कर रहे हैं, उस लक्ष्य को हासिल करने पर पर्यावरण, हमारी संस्कृति और मानवीय मूल्यों पर क्या असर पड़ेगा?

का उपयोग करते–करते उन्हें खेती की प्राकृतिक तकनीक की जानकारी न रही हो, तब प्रशिक्षण की जरूरत पड़ेगी।	
यह तय करना कि तय लक्ष्य को हासिल करने के लिए क्या करना होगा? • किन संसाधनों की जरूरत होगी और वे कहाँ से आयेंगे? जब हम संसाधनों की बात करते हैं, तब उसमें केवल आर्थिक संसाधन ही शामिल नहीं होते हैं। इसमें कौशल और तकनीकी विशेषज्ञता की जरूरत होती है। इसमें श्रम के संसाधन की जरूरत होती है। जब हम समुदाय की सहभागिता की बात करते हैं, तब उसमें महत्वपूर्ण बात यही होती है कि समुदाय अपने संसाधनों का इसमें क्या और कैसे उपयोग करता है? यह याद रखा जाना चाहिए कि हमारी सरकार एक निर्धारित बजट या आर्थिक संसाधन गांवों/पंचायतों को देती है। उन संसाधनों का उपयोग समुदाय कैसे करेगा, यह तय करने में उन्ही (समुदाय) की अहम भूमिका होना ही सामुदायिक सहभागिता है। • जो हम करना चाहते हैं, उसके साथ कौन सी नीति, क़ानून और कार्यक्रम–योजनाएं जुड़े हुए हैं? आज शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, रोज़गार, सामाजिक सुरक्षा, बाल संरक्षण, बालिका सुरक्षा आदि पर कई सरकारी कार्यक्रम, नीतियां बने हुए हैं। इन पर समुदाय में खुलकर और बार–बार बात होना चाहिए। यदि समुदाय विकास की प्रक्रिया में नेतृत्व	**मिलकर समीक्षा और मूल्यांकन करें यानी सीखों को समेटें और उनके आधार पर विकास की सहभागी प्रक्रिया को मज़बूत बनायें।** • यह जांचते रहना कि विकास और बदलाव की जो सोच हमने बनायी है, उसे हासिल करने के लिए किय गए प्रयासों से हम कहाँ तक पंहुचें है? • हमारे समुदाय के भीतर कहीं भेदभाव या टकराव तो नहीं है? • यदि हम कोई लक्ष्य हासिल नहीं कर पाए, तो उसके क्या कारण रहे? • क्या हम अपनी क्षमताओं और संसाधनों का सही उपयोग कर पा रहे हैं? • एक बार फिर से यह सवाल पूछना कि अपने गांव/बसाहट और समाज में सबसे वंचित परिवार या समुदाय कौन सा है? क्या उसके हितों और जरूरत को पूरा महत्व दिया गया? • अब तक की प्रक्रिया में लैंगिक, जातिगत, विकलांगता, आर्थिक या सामाजिक या किसी भी आधार पर कोई ऐसा तो नहीं है, जिसकी सहभागिता सुनिश्चित न हो पा रही हो।

की भूमिका ले तो वह इन योजनाओं और क़ानून के क्रियान्वयन में बाद बदलाव ला सकता है। • जब हम ये काम करेंगे तब कौन सी चुनौतियां–दिक्क्तें सामने आ सकती हैं और उनसे समुदाय कैसे निपटेगा – हो सकता है आर्थिक संसाधन कम पड़ जाएँ या समुदाय के भीतर किसी बात पर विवाद हो जाए; हमें इनके कारणों और समाधान के बारे में सोचना होगा। • मिलकर–एकजुट होकर काम करने की प्रक्रिया तय करें। मौजूदा व्यवस्था में कई दिकत्तें हैं, जिनके चलते समुदाय या ग्रामसभा के द्वारा निर्णय लिए जाने के बाद भी उनको लागू नहीं किया जा पाता है। इससे समुदाय में एक निराशा आती है। तब भी कोशिश यही हो कि अगले कदम के बारे में मिलजुलकर सोचा जाए।	

इस गतिविधि को करने के लिए आपको अपने ही समुदाय में चर्चा की शुरुआत करना होगी।

यह पहचान करते हुए कि वहाँ कौन से समस्या है या क्या किये जाने की जरूरत है, गतिविधि की शुरुआत करना होगी।

इस गतिविधि के माध्यम से आप अपने समुदाय के बारे में जानकारी इकठ्ठा करेंगे, समस्या की पहचान करेंगे, वहाँ कौन ताकतवर या प्रभावशाली है, यह पता करेंगे, संसाधन कहाँ से आयेंगे, यह विश्लेषण करेंगे, विकास की रूपरेखा बनायेंगे, लोगों को एकजुट या लामबंद करेंगे और सबसे वंचितों की सहभागिता सुनिश्चित करते हुए विकास का कार्यक्रम गढ़ेंगे।

आपको इसकी बिंदु वार रिपोर्ट बनाना होगी।

- इन आधारों पर वे अपने क्षेत्र में यह देखें कि वहाँ आम लोग या समुदाय के सहभागिता किन–किन कामों में है और किन–किन कामों में नहीं है?

- इसके साथ ही उन्हें यह भी पता लगाना होगा कि समुदाय की सहभागिता सुनिश्चित क्यों नहीं हो पा रही है?

  वे यह पता लगाएं कि विकास की योजना बनाने में समुदाय की सहभागिता क्यों नहीं हो पा रही है – कारण क्या हैं?

अधिक जानकारी के लिए संदर्भ सूत्र

सामुदायिक संगठन और गतिशीलता यह विषय समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, समाजकार्य, प्रबन्धन इत्यादि अनेक सामाजिक विज्ञानों की विषय–वस्तु हैं। अतः विस्तार से जानकारी के लिये इन विषयों की संबंधित पुस्तकों से अध्ययन किया जा सकता है। कुछ संदर्भ सूत्र निम्नवत हैं–

- **मानव समाज संगठन एवम् विघटन के मूल तत्व** — डा. डी.के.सिंह, डा. सौरभ पालीवाल, डा. रोहित मिश्र, न्यू रायल बुक कंपनी, लखनऊ
- **समाजशास्त्र की मूलभूत अवधारणायें** — डा. अरूण कुमार सिंह, न्यू रायल बुक कंपनी, लखनऊ
- **व्यक्ति और समाज** — प्रोफेसर पीडी मिश्र, डॉ (श्रीमती) बीना मिश्रा, न्यू रायल बुक कंपनी, लखनऊ
- **भारतीय समाज** — श्यामाचरण दुबे
- **मानव और संस्कृति** — श्यामाचरण दुबे
- **परंपरा इतिहास बोध और संस्कृति** — श्यामाचरण दुबे

■■■

9.5 : समुदायिक संगठित पहल

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप जान सकेंगे कि–

- सामुदायिक संगठित पहल का क्या अर्थ है?
- सामुदायिक संगठित पहल के प्रमुख मूल्य और सिद्धान्त कौन–कौन से हैं?
- सामुदायिक संगठित पहल समाज में क्यों आवश्यक होती है?
- सामुदायिक संगठित पहल की तकनीकें कौन–कौन सी हैं?
- मध्य प्रदेश के संदर्भ में सामुदायिक संगठित पहल के अनुकरणीय उदाहरण कौन–कौन से हैं?

मध्यप्रदेश के बडवानी जिले का आदिवासी बहुल पाटी विकासखण्ड पहाड़ी उतार–चढावों के बीच बसा हुआ क्षेत्र है। यहाँ खेती करके जीवन–यापन करना संभव नहीं होता। पिछले कुछ दशकों में विलासितापूर्ण जीवन की लालसा में बाहरी लोगों ने जंगल बचने नहीं दिए। ऐसे में मजदूरी ही स्थानीय आदिवासियों का मुख्य जीवन–यापन साधन बन जाता है, लेकिन मजदूरी भी नियमित रूप से नहीं मिलती थी। पाटी में आदिवासियों के हकों के लिए एक संगठन जागृत आदिवासी दलित संगठन (जेएडीएस) सक्रिय रूप से काम करता है। इस सदस्यता आधारित संगठन में लगभग 5000 परिवार सक्रिय सदस्य हैं। ***इसका सिद्धांत है जिसकी लड़ाई, उसकी अगुवाई यानी जिनके हकों की बात है, उन्हें ही संघर्ष का नेतृत्व करना चाहिए।***

ऐसे में फरवरी, 2006 से भारत में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कानून लागू हुआ। यह कानून कहता है कि गांव में रहने वाले हर परिवार को सालभर में 100 दिन के रोजगार की गारंटी है। यह रोजगार सरकार उपलब्ध करवाएगी। यह एक मांग आधारित कानून है यानी कि लोग काम मांगेंगे तो उन्हें 15 दिन के भीतर काम उपलब्ध करवाना सरकार और क्रियान्वयन एजेंसियों की जिम्मेदारी है। यदि उन्हें 15 दिन में काम नहीं मिलता है तो उन्हें कानूनन ***"बेरोजगारी भत्ता"*** *पाने का अधिकार होगा। कानूनी प्रावधान यह भी कहता है कि जो मजदूर इस कानून के तहत काम करेंगे, उन्हें अपने काम के एक सप्ताह के भीतर मजदूरी का भुगतान हो जाना चाहिए। यदि मजदूरी का भुगतान काम करने के 7 दिनों में नहीं होता है तो सरकार–क्रियान्वयन एजेंसियाँ* ***'देरी से मजदूरी के भुगतान का मुआवजा'*** *देने के लिए बाध्य होंगी। संगठन ने पूरे क्षेत्र में हर परिवार, हर व्यक्ति को इस कानून और उसके महत्व के बारे में केवल सूचना ही नहीं दी, बल्कि उन्हें इस कानून और इसके प्रावधानों का उपयोग करने के लिए प्रेरित भी किया।*

*जब यह कानून अस्तित्व में आया तो सरकार ने शुरू में अपनी तरफ से यानी लोगों के द्वारा बिना काम मांगे ही मजदूरी देना शुरू कर दिया। ऐसा इसलिए भी हुआ क्योंकि सरकार ने अपने नियमित रूप से होने वाले ग्रामीण निर्माण कार्यों को इस कानून की योजनाओं से जोड़ दिया था। जब पाटी विकासखण्ड में बिना मांग के काम दिया जाने लगा, तब पाटी के आदिवासियों ने तय किया कि हम कानून के प्रावधानों के मुताबिक काम की मांग करके ही काम लेंगे। ऐसा इसलिए जरूरी था क्योंकि यदि निर्धारित समय में काम नहीं मिला या कानून के मुताबिक समय पर मजदूरी नहीं मिली तो अन्य हकों को पाने के लिए काम की मांग किये जाने का प्रमाण देने की जरूरत होगी। इसके बिना कानूनी हक नहीं मिलते। लोगों ने संगठित होकर **"काम की मांग"** की। उस वक्त केवल यही क्षेत्र था, जहाँ कानून के प्रावधान के मुताबिक काम उपलब्ध करवाया गया।*

संगठन के सदस्यों ने आवेदन देकर काम माँगा। काम की मांग के एवज में कई आवेदकों को काम नहीं मिला। तब उन्होंने कानून द्वारा तय पूरी प्रकिया का पालन किया। कई स्तरों पर उन्हें हतोत्साहित भी किया गया। संगठन नियमित रूप से बैठक करता और कानून के प्रावधानों को बार–बार पढ़ता। इसके लिए वे संगठित होकर जिला कलेक्टर के दफ्तर भी गए और मीडिया के जरिये भी उन्होंने अपनी बात कही।

उन्होंने तय किया था कि रोजगार तो जरूरी है, पर कानून का पालन करके उसे भी मजबूत बनाना जरूरी है। जून से अक्टूबर, 2006 तक 5 महीनों के संघर्ष के बाद अक्टूबर में 1574 मजदूरों को बेरोजगारी भत्ते का भुगतान किया गया। जागृत आदिवासी दलित संगठन की कार्यकर्ता माधुरी बहन कहती हैं कि "व्यवस्थाएं और कानून तो बने हैं, किन्तु वे लोगों के हित में लागू नहीं होते हैं। हमारे हक संविधान और कानून में लिखे हैं, किन्तु उन्हें लागू करने के लिए संगठित पहल करना जरूरी है।"

9.5.1 सामुदायिक संगठित पहल

सामुदायिक संगठित पहल का मतलब है किसी चुनौती से निपटने के लिए एकजुट होकर पहल करना। इसमें केवल मांग करना शामिल नहीं है, बल्कि समस्या के समाधान के रूप में एक विकल्प खड़ा करना भी इसका हिस्सा है। जब हम सामुदायिक संगठित पहल की पहल करते हैं, तब उसमें सबसे अहम बात यह होती है कि मुद्दे या समस्या को अपनी नियति के रूप में ही स्वीकार न कर लें। जातिगत व्यवस्था, लैंगिक भेदभाव से लेकर गरिमा, सम्मान, शिक्षा, पोषण, स्वास्थ्य, पर्यावरण तक के मुद्दों पर समाज को नेतृत्व लेकर बदलाव की कमान लेना होगी। यह एक औपचारिकता पूरी करने वाला प्रोजेक्ट नहीं है। यह समुदाय के द्वारा समुदाय की बेहतरी के लिए की जाने वाली सांगठनिक और योजनाबद्ध कोशिश है।

9.5.2 समुदाय के संगठित पहल का मतलब

समुदाय के लिए संगठित पहल का मतलब है किसी विषय, मुद्दे या हक को समझते और सीखते हुए एक लक्ष्य को हासिल करने के लिए समुदाय का लामबंद या एकजुट होना और सहभागी रूप से बदलाव के लिए सतत् पहल करना। इस पहल में कुछ सिद्धांत हैं, जिनका पालन किया जाना अनिवार्य होता है। जैसे समानता और लक्ष्य के प्रति प्रतिबद्धता। यह एक प्रक्रिया आधारित काम है, जिसका समय–समय पर मूल्यांकन होते रहना चाहिए।

चित्र 9.5.1: समुदाय की पहल

स्थायी सामुदायिक संगठित पहल का मतलब है जब समुदाय मुद्दे/समस्या या किसी बदलाव के मकसद पर लगातार सक्रिय रहता है। सशक्त होता जाता है और एक समस्या के निराकरण के बाद शांत नहीं हो जाता है।

यह एक चुनौतीपूर्ण काम है क्योंकि ज्यादातर समुदाय बहुत लम्बे समय से गरीबी, अभाव, उपेक्षा, जातिगत भेदभाव से पीड़ित रहे हैं। उनके लिए लामबंद होकर बदलाव के लिए आगे आना एक कठिन निर्णय होता है। कई ऐसे कारण रहे हैं जिससे उनके मन में यह शंका बनी रहती है कि हमारी व्यवस्था उनके साथ, उनके पक्ष में, उनके हकों के लिए नहीं खड़ी होगी।

इतना ही नहीं अब हम देखते हैं कि जिस तरह से सामाजिक और आर्थिक ताने–बाने में बदलाव हो रहा है, वे उससे हमेशा अनजान रहे हैं। जिस तरह से राशन की दुकान से लेकर एक सार्वजनिक स्थान तक एक व्यक्ति से उसकी पहचान पूछी और जाँची जाती है, उससे वह सहज नहीं होता है। हमारे समाज के भीतर अलग–अलग समुदायों की अपनी–अपनी व्यवस्थाएं रहीं हैं। किसी भी सामुदायिक मामले पर निर्णय लेने के उनके अपने तरीके रहे हैं। नयी शासन व्यवस्था में जिस तरह से नये ढाँचे बनाये गए हैं, उनसे वे अनभिज्ञ और अचंभित भी दिखते हैं। ग्रामसभा से लेकर देश के स्तर तक उन्हें निर्णय लेने की प्रक्रियाएं बहुत जटिल लगती हैं। ऐसे में जरूरी है कि समुदाय अपना आत्मविश्वास न खोये। अपनी क्षमताओं और ज्ञान पर उसका विश्वास बना रहे। सामुदायिक संगठित पहल का इस सोच के साथ गहरा जुड़ाव है।

हमें सबसे पहले कुछ सवाल पूछने होंगे यानी बुनियादी तैयारी

1. जिस विषय/मुद्दे या समस्या पर पहल किये जाने/संगठित होने की बात हो रही है, वह किसकी समस्या है? एक परिवार या व्यक्ति की या फिर समुदाय की।
2. हम जो प्रक्रिया अपना रहे हैं, उसमें स्थानीय समाज के अलग समुदायों/वर्गों (दलित, आदिवासी, अल्पसंख्यक आदि) का कितना स्थान है?

3. सामुदायिक संगठन, जो कि संगठित पहल में मुख्य भूमिका में है, में महिलाओं, विकलांगता से प्रभावित लोगों, अधिक उम्र वाले लोगों की भूमिका और सहभागिता क्या है?

4. हम जो निर्णय ले रहे हैं, उसकी प्रक्रिया क्या है? निर्णय लेने की प्रक्रिया में कितने लोगों की सहभागिता है?

5. क्या हम जो प्रक्रिया चला रहे हैं, उसकी आलोचनात्मक समीक्षा के लिए तैयार हैं?

6. क्या हम केवल एक समस्या के हल के लिए लामबंद हो रहे हैं?

7. सामुदायिक संगठित पहल की हमारी प्रक्रिया के सिद्धांत और मूल्य क्या हैं? क्या सभी उनका पालन करते हैं?

8. क्या हम यह जानते हैं कि संगठित पहल की प्रक्रिया में कुछ लोग भागीदारी नहीं कर रहे हैं? क्या हम यह जांचते हैं कि वे क्यों उस प्रक्रिया में सहभागी नहीं हैं?

9. क्या समस्या के समाधान में हमने अपना कोई विकल्प सोचा है और सामने रखा है या हम सोचते हैं कि कोई संस्था बाहर से आएगी और समस्या का समाधान करेगी।

10. क्या हमने विषय/मुद्दे या समस्या से जुड़े व्यवस्थागत–सामाजिक–आर्थिक पहलुओं का विश्लेषण किया है?

इन सवालों के जवाब से सामुदायिक संगठित पहल की एक ठोस जमीन तैयार होती है। वास्तव में ये सवाल जुड़े हुए हैं सामुदायिक संगठित पहल के मूल्यों और सिद्धांतों से।

9.5.3 सामुदायिक संगठित पहल – मूल्य और सिद्धांत

सामुदायिक संगठित पहल के मूल्य और सिद्धान्तों के लिए बुनियादी तैयारी हेतु हमने कुछ प्रश्नों के जरिये सामुदायिक पहल को जाँचने और परखने के लिये समीक्षात्मक प्रश्नों का अध्ययन किया। अपने संदर्भों में आप जब इनका उत्तर खोजेंगे तो सही निर्णय पर पहुँच सकेंगे। सामुदायिक संगठित पहल के कुछ प्रमुख सिद्धान्त निम्नवत हैं–

1. **सहभागिता**
2. **जवाबदेहिता**
3. **लोकतान्त्रिक, भेदभाव–विहीन और अहिंसक व्यवस्था**
4. **लक्ष्य में विश्वास**

सहभागिता

हमारी पहल किन्ही निजी हितों के लिए नहीं है। यह सार्वजनिक हितों के लिए है। व्यापक हितों के लिए है। ऐसे में व्यापक समुदाय का सामुदायिक संगठित पहल की प्रक्रिया में शामिल होना एक बुनियादी सिद्धांत है।

1. **संगठन के प्रक्रिया में खुद की प्रेरणा से सहभागिता करना** – यह देखना कि जब कोई काम हो रहा है तब लोग खुद स्व–प्रेरणा से उसमें शामिल हो रहे हैं या उन्हें इकठ्ठा करने के लिए बहुत कोशिशें सामुदायिक संगठक को करना पड़ रही हैं। जब लोग मन से शामिल होंगे तब सहभागिता की ऊर्जा का अहसास अपने आप होगा।

2. **परस्पर और सामूहिक संवाद वाली सहभागिता** – अलग–अलग लोगों के अलग–अलग अनुभव, विचार, भय और शंकाएं हो सकती हैं। उन्हें अपनी बात कहने का स्थान मिलना चाहिए। यह औपचारिक काम नहीं है। उनकी बात सबके द्वारा सुनी भी जाना चाहिए।

3. **काम में सहभागिता** – जिम्मेदारी का बंटवारा होना चाहिए ताकि सबको सक्रिय सहभागिता का मौका मिले। इससे ही यह अहसास भी पैदा होता है कि वास्तव में हम एक प्रक्रिया के सक्रिय हिस्से हैं।

4. **काम को पहचान–सम्मान देना** – जो लोग कुछ अहम काम कर रहे हैं, उनके काम को पहचान देना चाहिए, ताकि उनका उत्साह बढ़े।

5. **बातचीत में सहभागिता** – हम जो काम कर रहे हैं, उनके अनुभवों को साझा करना, निर्णय लेने में कुछ लोगों से संवाद करना और उनके विचार–सलाह लेना आवश्यक है।

6. **सूचना प्रदान करने के जरिये सहभागिता** – हो सकता है कि हमारे काम में अलग–अलग जगहों पर कई गतिविधियां चल रही हों। ऐसे में एक स्थान की गतिविधियों की जानकारी दूसरे स्थान के समूह को देकर हम उनका जुड़ाव सुनिश्चित कर सकते हैं।

7. **अप्रत्यक्ष सहभागिता** – कई बार कुछ लोग या संस्थाएं सीधे–सीधे समूह का या उसकी गतिविधियों का हिस्सा नहीं होते हैं, किन्तु वे समुदाय की या संगठन की किसी न किसी रूप में मदद करते रहते हैं। कुछ वकील, पत्रकार, राजनीतिज्ञ या सरकारी कर्मचारी इस तरह सहभागिता करते हैं। इनकी सहभागिता को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

जवाबदेही

एक साफ़ और स्पष्ट मंशा के साथ प्रक्रिया को चलाना बहुत जरूरी है। यह एक सामूहिक प्रक्रिया है, जो अंततः समाज के प्रति जवाबदेय है, क्योंकि सामुदायिक संगठित पहल के परिणामों का असर समाज पर गहरा और दीर्घकालिक होता है। कोई भी निर्णय लेते समय हमेशा हमें यह विचार करना होगा कि इसके समाज पर क्या असर होंगे? क्या इस निर्णय में ज्यादातर लोगों की सहभागिता है?

लोकतान्त्रिक और अहिंसक व्यवस्था

सामुदायिक संगठन के भीतर की व्यवस्था लोकतान्त्रिक मूल्यों पर आधारित होना चाहिए। उसमें किसी भी आधार पर भेदभाव नहीं होना चाहिए। भेदभाव का मतलब किसी को निर्णय की प्रक्रिया से दूर करना ही नहीं है। यदि किसी को अनावश्यक रूप से या कुटिल मंशा से निर्णय लेने के ज्यादा हक दिए जाते हैं, तो यह भी भेद–भाव है, क्योंकि यह व्यवस्था अपने आप में दूसरों के बहिष्कार का कारण बन जाती है।

लक्ष्य में विश्वास

हमने जो लक्ष्य मे तय किया है, उसके बारे में समूह में गहरी और सहभागी बातचीत करना चाहिए। यह चर्चा बीच–बीच में होते रहना चाहिए ताकि यह जाँचा जा सके कि हम अपने तय लक्ष्य के प्रति सजग और दृढ़ निश्चयी हैं।

9.5.4 सामुदायिक संगठित पहल – एकजुटता का नजरिया

सामुदायिक संगठित पहल–एकजुटता	समाज पर प्रभाव
अपने समाज के बारे में गहराई से विचार करने का अवसर; ताकि गैर–बराबरी, गरीबी, आजीविका के संकट, कुपोषण, जलवायु परिवर्तन जैसे मसलों की जड़ों को समझा जा सके।	समस्या के केवल तात्कालिक कारणों तक ही बात सीमित नहीं रहती है। समस्या के स्थायी समाधान की संभावना बनती है।
ऐसी प्रक्रिया जिसमें वंचित रहे तबकों, महिलाओं, युवाओं, विकलांगता से प्रभावित लोगों, मूलवंशी और धार्मिक अल्पसंख्यकों को बराबरी का स्थान और महत्त्व मिल सकता है।	बाहरी संस्थाओं, विचारों और प्रभावों पर समुदाय की निर्भरता कम होती है। समाधान खोजने की प्रक्रिया में उनका आत्मविश्वास बढ़ता है।
स्थानीय संसाधनों से चलने वाली प्रक्रिया – मानव संसाधन और आर्थिक संसाधन	आपदाओं और संकटों के निपटने के लिए समुदाय बेहतर कार्य योजना बना पाता है क्योंकि उसे समस्या के बारे में पता होता है और समाधान के रास्ते भी।
स्थानीय निकायों, सरकारी विभागों, सामाजिक संस्थाओं के साथ समुदाय अपनी प्राथमिकताओं के आधार पर समन्वय स्थापित कर सकता है।	स्थानीय निकायों की विश्वसनीयता और स्वीकार्यता बढ़ती है। उनके सक्षम बनने से राष्ट्रीय प्रक्रियाएं ज्यादा व्यावहारिक बन पायेंगी।

सामुदायिक संगठित पहल–एकजुटता	समाज पर प्रभाव
स्थानीय जरूरतों, संसाधनों और भविष्य की जवाबदेही को आधार बनाकर समुदाय खुद अपने विकास की परिभाषा और प्राथमिकताएं तय करता है।	जब समुदाय मुद्दे के कारणों का गहराई से विश्लेषण करता है, तब उन्हें पता चलता है कि आपसी भेदभाव और टकराव से समस्याएं बढ़ती गई हैं और अन्य स्वार्थी समूहों ने उनका लाभ उठाया है। समुदायों के बीच का तनाव कम होना शुरू होता है।
स्थायी संगठित पहल और संगठन की प्रक्रिया से एक सूचित, जानकार और निर्णय लेने में सक्षम समुदाय का निर्माण होता है।	सामुदायिक हित में मिलकर काम करने, सुख–दुःख में साथ खड़े होने की प्रवृत्ति विकसित होती है।

सामुदायिक संगठित पहल क्यों ?

चित्र 9.5. : कुपोषण प्रभावित बच्चे

सामुदायिक संगठित पहल के द्वारा ही हम किसी मुद्दे या समस्या के व्यापक प्रभावों को समझते हैं। समुदाय को यह पता चलता है कि मौजूदा समस्या समाज पर बहुत गहरा प्रभाव डाल रही है। उसे हल करने के लिए हमें खुद आगे आना होगा। हमने इसी पाठ्यक्रम के तहत पहले वर्ष में मॉड्यूल– पोषण और स्वास्थ्य देखभाल तथा बाल विकास सुरक्षा एवं शिक्षा में बच्चों के कुपोषण और उनके स्वास्थ्य के विषय पर गहरी चर्चा कर चुके हैं। अतः सामुदायिक संगठित पहल को समझने के लिए हम बच्चों के कुपोषण की स्थिति का उदाहरण लेकर बात करेंगे।

- कुपोषण के मुद्दे को नज़रंदाज़ नहीं किया जा सकता, क्योंकि यह बच्चों की शिक्षा से लेकर उनकी रचनात्मकता को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है,उन्हें विकलांग बना सकता है। कुपोषण एक–तिहाई बच्चों की मृत्यु का सीधा कारण होता है।
- इस बात की स्पष्ट समझ होना कि कुपोषण, पोषण की कमी और कुछ व्यवहारों से जुड़ा मामला है।

- यह अहसास होना कि कुपोषण बच्चों की क्षमताओं को कम करता है। यह उन्हें विकलांग बना सकता है। यह जातिगत और लैंगिक भेदभाव आधारित व्यवस्था का प्रतिबिम्ब है। यह जीवन को भी खत्म कर सकता है।
- यह महसूस होना कि कुपोषण के पैदा होने के पीछे संसाधनों का अभाव, मानसिकता और कभी–कभी त्रुटिपूर्ण नीतियाँ भी जिम्मेदार हैं।
- इस बात के लिए तैयार होना कि हमें सेवाओं, योजनाओं और राज्य की व्यवस्था को जवाबदेह बनाना होगा। इसके लिए स्थानीय योजनाएं बनाना, उन्हें क्रियान्वित करवाना और जरूरी कार्यक्रमों की नियमित निगरानी करना जरूरी है।
- कुपोषण विषय को समझने और सीखने की प्रक्रिया से जोड़ना। जिससे इस विषय पर समाज के सभी घटकों में जानकारी और जागरूकता बढ़े।
- समुदाय में स्थानीय स्तर पर संगठनात्मक और संस्थागत ढांचे (महिला मण्डल और स्वास्थ्य समिति) को इस विषय से जोड़ना और उन्हें सक्रिय करना आवश्यक है।
- स्वास्थ्य और पोषण शिक्षा का माहौल बनाना, ताकि व्यवहार में परिवर्तन आए।

9.5.5 मूल मंतव्य

मुद्दे या समस्या पर सीख और शिक्षा आधारित कोशिश – यानी हम यह सोचते हैं कि आखिर समस्या के कारण क्या हैं? क्या इसके कोई स्थानीय समाधान हैं? क्या हम सब मिलकर किसी हद तक उसका समाधान कर सकते हैं? सामुदायिक संगठित पहल का मतलब समुदाय को नेतृत्व सौंपने की मंशा से जुड़ा हुआ है।

यदि हम बच्चों के कुपोषण के मुद्दे पर संगठित या लामबंद हो रहे हैं, तो हमें कुछ प्राथमिकताएं तय करनी होंगी। जैसे –

- यह स्पष्ट होना जरूरी है कि वास्तविक परिस्थितियां क्या हैं और हम उनमें किस तरह का बदलाव लाना चाहते हैं? लक्ष्य स्पष्ट होना चाहिये।
- जरूरी व्यवहारों, नीतियों और व्यवस्था में बदलाव के लिए स्थानीय और प्रभावित समुदाय की भूमिका नेतृत्वकारी हो। समाधान बाहर से नहीं आएगा।
- सामुदायिक संगठन मिलकर समुदाय में कुपोषण की स्थिति का आंकलन करता है। जिससे समुदाय की समस्या के आकार और गंभीरता का पता चलता है।

- यह पता चलता है कि बच्चों को उनकी उम्र के अनुसार पोषण की जरूरत होती है। जब उनकी जरूरत पूरी नहीं होती है, तब वे कुपोषित होने लगते हैं। अर्थात् समस्या के स्वरुप को समझने में समुदाय सक्षम होने लगता है।

- उन्हें यह जानकारी है कि नवजात शिशु को जन्म के एक घंटे के भीतर ही माँ का दूध मिलना चाहिए, छह महीने तक केवल माँ का दूध मिलना चाहिए और 6 महीने का होते ही माँ के दूध के साथ ऊपरी आहार मिलना शुरू होना चाहिए। अब देखना यह है कि हमारे समुदाय में वास्तव में यह होता है या नहीं?

- बीमारियाँ भी बच्चों को कुपोषण के चक्र में धकेल देती हैं। यदि उन्हें डायरिया, मलेरिया, निमोनिया होता है, और यदि सही समय पर उनकी देखभाल नहीं होती है और इलाज़ नहीं मिलता है, तो वे कुपोषित हो जाते हैं यह कुपोषण गंभीर हो सकता है। कुपोषण से बीमारी और बीमारी से कुपोषण एक दर्दनाक चक्र होता है।

- इसमें भोजन, उनके वज़न में बढ़ोत्तरी की जांच यानी वृद्धि निगरानी, टीकाकरण के महत्व के बारे में पता है। यह देखना की पोषण, प्रारम्भिक बाल देख–रेख और स्वास्थ्य सेवाओं की समुदाय निगरानी करे।

- कुछ बच्चे बहुत गंभीर रूप से कुपोषित हो जाते हैं। उन्हें तत्काल उपचार, पोषण और देखभाल की जरूरत होती है। गंभीर कुपोषित बच्चों के उपचार की पूरी प्रक्रिया लागू हो, यह सुनिश्चित करना। यानी प्राथमिकता तय करना।

- कुछ समस्याएं स्थानीय स्तर पर हल हो सकती हैं, पर कुछ समस्याओं के लिए व्यवस्था में बदलाव की कोशिश करना पड़ता है। कुपोषण के मामले में आंगनवाड़ी कार्यक्रम और प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं में ढांचागत सुधार की पहल करना। व्यवस्था में बदलाव की कोशिश शुरू करना।

9.5.6 सामुदायिक संगठित पहल– कुछ तकनीकें

हम अधिकारों को हासिल करने के लिये अभियान को एक चरणबद्ध प्रक्रिया के रूप में स्वीकार करते हैं और इस प्रक्रिया को हम निम्न बिन्दुओं में स्पष्ट कर सकते हैं –

1. गरीबी, विषमता, अभाव और भेदभाव के विभिन्न आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक पहलुओं को जानना, समझना और स्वीकार करना।

2. इन पहलुओं पर विभिन्न स्तरों पर जानकारियां और अनुभव इकट्ठा करना। यह जानकारियां और अनुभव योजनाओं, नीतियों, बजट, नियमों और जमीनी स्तर पर उनके क्रियान्वयन के साथ–साथ समुदाय पक्ष से सम्बन्धित होते हैं।

3. मुद्दों की राजनीतिक समझ के साथ तथ्यों और आंकड़ों का विश्लेषण और दस्तावेजीकरण करना।

4. ऐसे मंचों की पहचान करना जिन पर वंचित और उपेक्षित समुदायों के मुद्दे उठाये जा सकते हैं। जैसे–सम्बन्धित विभाग, न्यायालय, मीडिया, इत्यादि के स्तर पर इन विषयों को उठाने का प्रयास किया जा सकता है।

5. समझ और रणनीति पर कौशल के विकास के लिये संवाद और प्रशिक्षण कार्यक्रम करना।

6. जन समूह की संगठित पहल के लिये यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि तकनीकी रूप से सिद्धान्त समझने के बाद व्यापक स्तर पर कार्यकर्ताओं, विशेषज्ञों और समुदाय के बीच एक ही मंच पर संवाद हो। इस संवाद के लिये जनसुनवाई का आयोजन किया जा सकता है। अपने आप में जब हम सब एक मंच पर इकट्ठा होकर अनुभव, व्यवस्था, अच्छे और बुरे के साथ–साथ भविष्य की संभावनाओं पर चर्चा करते हैं तो सकारात्मक परिवर्तन के लिये यह सुधार का एक अवसर होता है और नकारात्मक परिवर्तन के लिये दबाव का अवसर। मीडिया भी एक सघन अभियान और मुद्दे की व्यापकता के नजरिये से इन आयोजनों पर नजर रखता है।

जनहित के कई संघर्षों के अध्ययन करने पर हम पाते हैं कि –

1. समाज और व्यक्ति के जीवन से जुड़े मुद्दे पर आम व्यक्ति एकजुट होता है। बशर्ते हम उसकी स्थिति और सीमाओं को समझ सकें।

2. अभी भी राज्य और समाज की दिशाओं में पूर्ण साम्य नहीं हैं। यूं तो राज्य के पास अधिकार भी है दायित्व भी परन्तु कुछ अधिकारियों के गैर जिम्मेदाराना रवैये के कारण वह समाज के प्रति समग्रता में जवाबदेह दिखाई नहीं पड़ता। राज्य की पारदर्शिता भी प्रभावित होती है। ऐसी स्थिति में गांव के लोगों की गांव–समाज के विकास में सहभागिता ही नहीं हो पाती है। कई क़ानून बने हैं, किन्तु उनका

चित्र 9.5. : सामुदायिक ग्रीक क्रांति

समुदाय के स्तर पर क्रियान्वयन नहीं होता है। परिणाम यह होता है कि जो ताकतवर होता है वह राज्य के करीब होता जाता है और कमजोर लोग समाज के करीब होते जाते हैं। समाज केवल राज्य के निर्देशों का पालन करता रहता है।

3. ताकतवर वह होता है जिसकी सूचनाओं और जानकारियों तक पहुंच है और जो उनका उपयोग करके निर्णय को प्रभावित कर सकता है। यही कारण है कि सूचना हासिल करना अपने आप में एक कठिन कार्य हैं।

4. सामाजिक विकास एक राजनैतिक प्रक्रिया है। इसलिये संघर्ष के क्षेत्र में जरूरी है कि हम राजनैतिक व्यवस्थाओं को अपनी ताकत के बल पर प्रभावित कर सकें।

5. आमतौर पर राजनैतिक व्यवस्था आम व्यक्ति के हितों को ध्यान में नहीं रखती हैं और उन्हें नजर अंदाज करती हैं। इसमें समाज के प्रभावशाली वर्ग और बाजारवादी व्यवस्था के समर्थक उस राजनैतिक व्यवस्था को अपना सहयोग देते हैं। तब हमें दबाव की रणनीति अपनाना पड़ती है।

6. इसमें कोई शक नहीं है कि मौजूदा व्यवस्था/विकास कार्यक्रमों में कई स्वार्थी तत्व भी हैं, जो नहीं चाहते हैं कि व्यवस्था में पारदर्शिता आये और समुदाय की सहभागिता बढ़े। ऐसे में उनसे निपटने के लिए दबाव की रणनीति का सबसे अहम् हिस्सा है एक समग्र अभियान।

7. अभियान में शामिल होते हैं वे लोग जो मुद्दे या समस्या से प्रभावित हैं, या वे जो प्रभावित और वंचित वर्गों के अधिकारों के समर्थक हैं, या वे जो व्यवस्था को संवेदनशील बनाने में मदद कर सकते हैं। वे जो नीतियां बनाने और क्रियान्वित करते हैं।

8. इस अभियान को मजबूत विचारधारा वाले सामाजिक समूह खड़ा करते और आगे बढ़ाते हैं। इस समूह को भलि–भांति यह विशलेषण कर लेना चाहिये कि आम आदमी मुद्दे और मुद्दे के लिए संघर्ष की जरूरत को स्वीकार करता है।

9. यह कोशिश होना चाहिये कि इस संघर्ष की प्रक्रिया का नेतृत्व लोगों के हाथ में रहे और संस्था इस पर नियंत्रण करने की कोशिश न करें।

10. संघर्ष के लिये अपनाये जाने वाले उपकरण जनतांत्रिक और अहिंसक होने चाहिये। दमन के सामने संयम ही सबसे सार्थक हथियार होता है।

11. संघर्ष और दबाव बनाने की प्रक्रिया में स्थानीय समूह और नेतृत्व का शामिल होना जरूरी है।

12. यह हमेशा ध्यान रखें कि हम गांव के लोगों की समस्यायें जरूर हल करवा रहे हैं परन्तु हमारा लक्ष्य सामाजिक बदलाव है। हमें एक ऐसे समाज का निर्माण करना चाहते हैं, जिसमें परस्पर सम्मान हो। जिसमें सामाजिक मूल्यों के आधार पर व्यवस्थाओं का निर्माण होता हैं।

13. हम संघर्ष की प्रक्रिया को लोगों के सशक्तिकरण का ज़रिया मानते हैं। जब लोग हर प्रक्रिया में शामिल होते हैं तब वे जंगल, जमीन और अन्य मुद्दों के राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक पक्षों का विश्लेषण करते हैं। वे खुद तय करते हैं कि क्या सही है और क्या गलत हैं; यहीं से संगठन का निर्माण होना शुरू होता है।

14. अभियान को सामाजिक बदलाव के लक्ष्य तक ले जाने के लिये जरूरी है कि हम सभी में ईमानदारी, पारदर्शिता, परस्पर सम्मान और सत्य की भावना हो।

15. सतत् संवाद ही अभियान को स्थायित्व देता है। यह जरूरी इसलिये भी है ताकि मतभेद, मनभेद में परिवर्तित न हों।

16. निर्णय लेने की प्रक्रिया में सहभागिता बहुत जरूरी है ताकि अच्छे और बुरे दोनों ही परिणामों का दायित्व पूरा समूह ले न कि कोई व्यक्ति विशेष।

बात रखने का तरीका क्या होना चाहिए

1. उर्जा के साथ बात करना चाहिए जिससे लोग आपकी बातें स्पष्ट रूप से समझ सकें।
2. बात करने में अपनी अंदरूनी रूचि प्रदर्शित होनी चाहिये।
3. वास्तविकता को समझकर मार्गदर्शन देना चाहिये।
4. लोगों तक मुद्दा या बात पहुंचाना बुनियादी जरूरत है।
5. लोगों से बातें गंभीरता से करनी चाहिये।

कार्य करने के तरीके

1. गांव/समुदाय के स्तर पर राजनीति संवेदनशील होती है। अतः कोई भी कदम उठाने से पूर्व अपना दृष्टिकोण और लक्ष्य स्पष्ट रखकर कार्य करना चाहिए।
2. व्यवस्था में दोषी व्यक्ति को चिन्हित करना और उसके व्यवहार में परिवर्तन के सकारात्मक प्रयास उपयोगी होते हैं।
3. सभी लोगों को साथ रखकर कार्य करना चाहिए। लोगो को दिल से जोड़ने की जरूरत होती है।

4. समस्याओं के निराकरण के लिये प्रयत्नशील होने से आपकी क्षमतावृद्धि होती है। इसलिये गांव की समस्याओं की पहचान कर, गांव की परिस्थिति का विश्लेषण करने से आपको अपने कार्यक्षेत्रों में आत्म विश्वास मिलता है।

5. व्यवहारिक पक्ष को ध्यान में रखकर कार्य करना आवश्यक है। इसलिये पहले समस्याओं की जड़ों को खोजना और फिर उनके हल के लिये प्रयत्नशील होना चाहिए।

6. लोगों को साथ लेने से संगठन की रूपरेखा बनती है जिसमें बहुत शक्ति होती है। अपने संगठनों को अन्य संगठनों से संवाद कर सार्थक रूप में जोड़ना चाहिए।

7. इंदिरा अवास, रोजगार गारंटी योजना, आंगनवाड़ी, स्कूल, सामाजिक सुरक्षा, जमीन, जंगल, राशन, पीने का पानी, खेती आदि विषयों पर पंचायत में सवाल और चर्चा करना जरूरी है। योजनाओं और कार्यक्रमों में भ्रष्टाचार के नियंत्रण के लिए सूचना का अधिकार बहुत महत्वपूर्ण है।

8. लोगों की समस्याओं को समझने के लिए अध्ययन एवं स्वयं को जागरूक बनाना जरूरी है। सही चीजों का सही समय में इस्तेमाल होना चाहिए।

9. आवेदन लिखित में देना चाहिए एवं उसकी रसीद एवं पावती अवश्य लेना चाहिए।

सामुदायिक संगठित पहल के उपकरण हैं –

1. समस्या को देखना, समझना और समझाना।

2. हर विषय/मुद्दे और समस्या को हमें समुदाय के व्यवहार, रीति–रिवाजों और सांस्कृतिक व्यवहारों के सन्दर्भ में देखना होगा।

3. समुदाय के स्तर पर समुदाय के संसाधनों का आंकलन करना – मानव संसाधन, कौशल और क्षमताओं का विश्लेषण, आर्थिक संसाधन और प्राकृतिक संसाधन आदि।

4. समस्या का मुद्दा बनने की प्रक्रिया को समझना।

5. यह तय करना कि मुद्दा लोकहित का है। (मुद्दे राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक पक्षों का विश्लेषण करना।)

6. मिलकर मुद्दे का ध्येय और लक्ष्य तय करना। एकजुट होना। जहाँ भी जाना एक साथ जाना। मिलकर अपनी बात रखना।

7. जानकारियों का संग्रहण और दस्तावेजीकरण।

सामुदायिक संगठित पहल अभियान की प्रक्रिया शुरू करना

1. संगठन तैयार करना।
2. संगठनों का गठबंधन तैयार करना।
3. मुद्दे को बहस में लाना।
4. आंदोलन खड़ा करना।
5. नीतियों के स्तर पर मुद्दे को पहचानना (जैसे– विधायिका और कार्यपालिका)
6. मुद्दे को व्यापक आधार देने के लिये मीडिया, शैक्षणिक संस्थाओं का उपयोग करना।
7. नीतियों में बदलाव और निर्माण के लिये दबाव की रणनीति अपनाना। (इसके लिए न्यायपालिका, जनप्रतिनिधियों और विधायिका के संपर्क करना और शांतिपूर्ण कार्यक्रम, सम्मेलन, जनसभा–रैली का उपयोग करना।)

संघर्ष क्यों जरूरी है?

1. क्योंकि मुद्दा केवल उतना ही नहीं है जितना ऊपर से नजर आता है बल्कि मुद्दा बहुत व्यापक है।
2. क्योंकि यह राज्य की दृष्टि, नीतियों, प्राथमिकताओं और विचार से जुड़ा है।
3. क्योंकि वंचित और उपेक्षित वर्गों की बेहतरी राज्य और समाज के प्राथमिक लक्ष्य नहीं हैं।
4. क्योंकि बेहतर समाज के निर्माण के लिए दूरगामी लक्ष्य निर्धारित करना जरूरी है।
5. क्योंकि जब हम समस्या को सतही रूप से देखते हैं और उसके कारणों को नहीं समझते हैं तो वह समस्या एक व्यापक मुद्दा बन जाती है।

8. क्योंकि यह एक व्यक्ति, एक परिवार या एक गांव का मामला नहीं है। समाज में बदलाव व्यापक संघर्ष से ही समुदाय में विष्लेषण करने और नये समाज को स्थायी बनाये रखने की क्षमता का विकास होता है।

9.5.7 इंटरनेट और सोशल मीडिया का उपयोग

संवाद करने का कौशल और संचार माध्यमों के उपयोग के बारे में मॉड्यूल– संचार और विकास के लिए जीवन कौशल शिक्षा में हमने विस्तार से जानकारी प्राप्त की है। उसे व्यावहार में उपयोग करने के लिए हम यहाँ पुनः बात–चीत कर रहे हैं। नए सन्दर्भों में हम सभी यह महसूस करते हैं कि समुदाय के हित और हकों के आवाज को अलग–अलग मंचों से उठाना जरूरी है। इसमें शामिल हैं –

1. अखबार और टेलिविजन
2. सोशल मीडिया (फेसबुक, ट्विटर, वाट्स–एप, लिंक्ड–इन, ब्लागिंग आदि)
3. समाचार और विचार आधारित वेबसाइट्स
4. याचिकाएं जारी करने वाली वेबसाइट्स (जैसे – https://www.change.org/**)**

सामुदायिक संगठित पहल की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि हम अपनी व्यवस्था, सरकार, अधिकारों और ताज़ा नीतियों के बारे में कितना जानते हैं। वर्तमान समय जन वकालत के नज़रिए से संभावनाओं से भरा हुआ समय भी है। सूचना तकनीक और संचार के नए माध्यमों के जरिये यह संभव हो पाया है कि हमारे मुद्दे और लोगों की स्थितियों को विश्लेषण के साथ दुनिया भर में फैलाया जा सके। हांलाकि अब भी इंटरनेट और नये सूचना उपकरण समाज की बड़ी आबादी की पंहुच से दूर हैं। इस दूरी के बने रहने के कई आर्थिक, राजनीतिक कारण भी हैं। ऐसे में जो समूह या लोग समाज के वंचित तबकों के पक्ष में खड़े होने का निर्णय लेते हैं, उनके लिए इन तकनीकों के उपयोग की बहुत सी संभावनाएं बनी रहती हैं। हम ऐसी ही कुछ संभावनाओं पर बात कर सकते हैं।

1. आज सूचना के अधिकार और व्यवस्था में पारदर्शिता लाने के लिए सरकारों (राज्य और केंद्र सरकार) ने अब कई जानकारियों और आंकड़ों को इंटरनेट से जोड़ दिया है। इसका सबसे अहम उदाहरण है महात्मा गाँधी ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना की सूचना प्रबंधन प्रणाली (एम् आई एस). आप www.nrega.nic.in पर जाईये आपको हर गांव के हर रोज़गार गारंटी जॉब कार्डधारी व्यक्ति की यह जानकारी मिल जाती है कि किसने कब और कितना काम किया और उसे मजदूरी का भुगतान हुआ कि नहीं!

   मध्यप्रदेश सरकार के लोक स्वास्थ्य और परिवार कल्याण विभाग ने अपनी वेबसाइट (http://www.health.mp.gov.in/bulletin.htm) पर यह जानकारी देना शुरू किया कि हर माह जिलों में कितने प्रसव हो रहे हैं, कितने संस्थागत है, कितने बच्चो को टीके लग रहे हैं, कितनी बच्चों और महिलाओं के प्रसव से सम्बंधित जटिलताओं के कारण मृत्यु हुई। ये आंकड़े सही हैं या गलत, इनका परिक्षण करना ही

जन वकालत की प्रक्रिया का एक चरण है। राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन में क्या हो रहा है इसकी बहुत सी जानकारी http://www.mohfw.nic.in/NRHM.htm पर उपलब्ध है।

2. आंगनवाड़ी व्यवस्था से संबधित जानकारियाँ http://mpwcdmis.gov.in/ पर उपलब्ध हैं।

हम अपनी संसद की गतिविधियों के बारे में मीडिया से ही थोडा बहुत जान पाते हैं। पर उनकी अपनी वेबसाइट् http://www.parliamentofindia.nic.in/ से भी हमें बहुत सी नयी जानकारियाँ मिलती हैं।

भारत में विकास और बदलाव के लिए कौन सी नीतियां अपनायी जा रही हैं और उन नीतियों के पीछे क्या तर्क है, अब ये बातें गोपनीय नहीं हैं। आप योजना आयोग की वेबसाईट http://planningcommission.gov.in/ पर जायेंगे तो आपको जानकारियों का अथाह भण्डार मिलता है। अब नीति आयोग की वेबसाईट – http://www.niti.gov.in/ भी नयी जानकारियाँ देती है।

3. सूचनाएं केवल सरकारी स्रोतों से ही नहीं मिलती हैं। कई जानकारियाँ और सूचनाएं हमें सरकार से नहीं मिल पाती हैं। हो सकता है सूचनाएं और आंकड़े मिल भी जाएँ, पर उनका विश्लेषण आसानी से नहीं मिल पाता है। इस जरूरत को पूरा करने के लिए 'सेंटर फार साइंस एंड एन्वायरमेंट' एक बहुत उपयोगी संसाधन उपलब्ध करवाता है – http://indiaenvironmentportal.org.in

4. हमें यह बात भी जानना चाहिए कि इंटरनेट पर एक बहुत ही उपयोगी सेवा उपलब्ध होती है। इस सेवा में हम कुछ खास किस्म (जैसे – http://www.google.co.in) की वेबसाइट पर जाकर अपने काम के शब्द डाल कर उनसे जुडी हुई कोई भी सामग्री खोज सकते हैं।

5. आज जब भी अधिकारों की बात होती है, तब यह जरूरी हो जाता है हम उन अधिकारों के बारे में जानें। बच्चों के अधिकारों के लिए हमने बाल अधिकार समझौते पर हस्ताक्षर किये हैं। उन्हे हम यहाँ से http://www.unicef.org/crc/index_30177.html जान सकते हैं। हमारे लिए अपने संघर्ष और बदलाव के काम का मूल आधार हमारा संविधान है जो http://indiacode.nic.in/coiweb/welcome.html पर उपलब्ध है। इसी तरह हमारे सामाजिक, राजनीतिक अधिकारों को जानने के लिए जानकारियाँ http://www2.ohchr.org/english/law/cescr.htm पर मिल जाती हैं। भारत सरकार के तंत्र के बारे में हमें http://india-gov-in/ पर से बहुत सी जानकारियां मिल जाती हैं।

6. मानव अधिकारों, बच्चों के अधिकारों, महिलाओं, अनुसूचित जाति और जनजाति समूहों के अधिकारों के लिए संविधान के प्रावधानों के मुताबिक कई आयोग बने हैं। उन सबकी जानकारियाँ इंटरनेट (http://nhrc.nic.in/, ncw.nic.in, http://ncpcr.gov.in/, http://ncsc.nic.in/, http://ncst.nic.in/index-asp?langid=1) पर उपलब्ध हैं और हम अपनी बात सीधे उन पर दर्ज कर सकते हैं।

7. जब अधिकारों का हनन होता है तब देश और दुनिया के स्तर कर कई जन समूह और संस्थाएं मौलिक अधिकारों के संरक्षण के लिए आवाज़ उठाने में अहम भूमिका निभाती हैं। एशियन ह्यूमन राइट्स कमीशन (http://www.humanrights.asia) मानव अधिकारों के रक्षा के लिए अपीलें जारी करता है, जो एक ही क्षण में दुनिया भर के पत्रकारों, बुद्धिजीवियों, संयुक्त राष्ट्र की संस्थाओं के साथ साथ हमारे प्रधान मंत्री और राष्ट्रपति तक भी पंहुच जाती हैं. इसी तरह एमनेस्टी इंटरनेशनल (http://www.amnesty.org/en/region/india) भी काम करती है। इनका साथ पाने के लिए जरूरी होता है कि हमारे पास सही–सही जानकारियाँ हों और हम उस मुद्दे के लिए लगातार काम संघर्ष करने के लिए तैयार हों।

8. आज यह भी संभावना है कि हम अपने ब्लॉग्स (www.blogger.com, http://wordpress.com/) और वेबसाइट्स बना सकते हैं, जिनसे आपकी बात केवल आप तक ही सीमित नहीं रहेगी बल्कि उन्हे दुनिया में कोई भी जान सकेगा और पढ़ सकेगा।

9. ज्यादातर लोग अब ईमेल का उपयोग करते हैं। हम कई लोगों के ई मेल पतों को मिलाकर अपना ई–नेटवर्क बना सकते हैं और अपनी बातों को उन तक नियमित रूप से पंहुचा सकते हैं। इसे 'ई ग्रुप' कहा जाता है।

10. इसके सतह ही आज इन तकनीक का सामाजिक चेहरा भी बनने लगा है। हममे से कई साथी और संस्थाएं सोशल साइट्स (यानी ऐसे इंटरनेट मंच जहाँ आप हमेशा जा सकते हैं, दूसरे लोगों से जुड़ सकते हैं, अपनी बात कह सकते हैं। इतना ही नहीं आप वहाँ खूब बहस भी कर सकते हैं) जैसे – www.facebook.com और www.twitter.com का खूब उपयोग करते हैं. इन साइट्स पर अपना खाता खोलने या इनका उपयोग करने के लिए आपको कोई शुल्क नहीं देना होता है।

हमने जाना

- सामुदायिक संगठित पहल का मतलब है किसी चुनौती से निपटने के लिए एकजुट होकर पहल करना। इसमें महज मांग करना शामिल नहीं है बल्कि समस्या के समाधान के रूप में एक विकल्प खड़ा करना ही इसका हिस्सा है।

- सहभागिता, जवाबदेही, लोकतान्त्रिक व्यवस्था और लक्ष्य में विश्वास सामुदायिक पहल के प्रमुख मूल्य और सिद्धान्त हैं।

- सामुदायिक संगठित पहल के समाज में दूरगामी परिणाम होते हैं इसलिए स्थितियों में बदलाव के लिये अथवा किसी मुद्दे के लिए सामुदायिक संगठित पहल आवश्यक होती है।

- सामुदायिक संगठित पहल के लिए कुछ तकनीकों का इस्तेमाल किया जाता है। इसमें बात रखने के तरीके, कार्य करने के तरीके, और संगठित पहल के उपकरणों को जानना आवश्यक है।

- अपनी समस्या या मुद्दे को विभिन्न मंचों पर उठाने के लिये सामुदायिक पहल के अन्तर्गत इंटरनेट और सोशल मीडिया का प्रभावी उपयोग किया जा सकता है।

कठिन शब्दों के अर्थ

- सामुदायिक संगठित पहल : समुदाय के लिए संगठित पहल का मतलब है किसी विषय, मुद्दे या हक को समझते और सीखते हुए एक लक्ष्य को हासिल करने के लिए समुदाय का लामबंद या एकजुट होना और सहभागी रूप से बदलाव के लिए सतत् पहल करना।

अभ्यास के प्रश्न

- सामुदायिक संगठित पहल का क्या मतलब है?
- समुदाय के साथ मिलकर संगठित पहल करने के लिए किस तरह की बुनियादी तैयारी की जरूरत होती है?
- समुदाय केंद्रित संगठित पहल के मूल्य और सिद्धांत क्या हैं?
- सामुदायिक संगठित पहल क्यों जरूरी है और इसका मकसद क्या होता है?
- सामुदायिक संगठित पहल को प्रभावी बनाने के उद्देश्य से इंटरनेट और सोशल मीडिया का उपयोग कैसे किया जा सकता है?

आओ करके देखें

आइये! अपनी सामाजिक प्रयोगशाला अपने गांव में सामुदायिक संगठित पहल करने का प्रयास करें। हम बच्चों के पोषण और स्वास्थ्य के बारे में पहल करेंगे। सबसे पहले गांव के लोगों के साथ मिलकर इन प्रश्नों के उत्तर खोजने का प्रयत्न करेंगे।

1. गांव के लोगों के हिसाब से कुपोषण पर सामुदायिक संगठित पहल का सबसे पहला कदम/चरण क्या होना चाहिए?
2. इस प्रक्रिया में सबसे सरल काम क्या है और क्यों?

3. इस प्रक्रिया में सबसे कठिन काम क्या है और क्यों?

4. इस प्रक्रिया में उन्हें सबसे ज्यादा मदद किससे मिलेगी और क्यों?

हम जानते हैं कि समुदाय को उसका व्यवहार बदलने के लिए प्रेरित करना सबसे अहम, किन्तु सबसे कठिन और चुनौतीपूर्ण काम है। हमें यह काम व्यवस्थित ढंग से करना होगा।

- हमारे यहाँ छह साल से कम उम्र के बच्चों के स्वास्थ्य, पोषण और सही विकास के लिए एकीकृत बाल विकास परियोजना (आईसीडीएस) चलाई जा रही है। इस परियोजना का संचालन गांव और बस्ती में आंगनवाड़ी के जरिये होता है।

- इस आंगनवाड़ी के लिए बच्चों को पोषण आहार, स्कूल पूर्व शिक्षा, टीकाकरण, वृद्धि निगरानी, जरूरी सन्दर्भ सेवाओं का हक दिया जाता है। वास्तव में हर बस्ती में एक आंगनवाड़ी केंद्र होना चाहिए और हर बच्चे को इन सेवाओं का लाभ मिलना चाहिए। वहाँ बच्चों को साल में 300 दिन पोषण आहार मिलता है। यदि कोई बच्चा अति कम वज़न का या अति गंभीर कुपोषित होता है, तो उसे यही से पोषण पुनर्वास केंद्र भेजे जाने की व्यवस्था की जाती है। बच्चों की स्थिति का पता उनके वज़न से लगता है। इसी केंद्र से गर्भवती और धात्री महिलाओं को भी पोषण आहार, जरूरी जानकारियां और सहयोग मिलता है। हर केंद्र में पीने के साफ़ पानी और स्वच्छता, बैठने की व्यवस्था, बच्चों के लिए खेलने का सुरक्षित स्थान भी होना चाहिए।

हम यह काम शुरू करेंगे, पर सबसे पहले यह देखेंगे कि क्या मिलते ही लोगों को कुपोषण और सामुदायिक संगठित पहल पर व्याख्यान देना है? नहीं। हमें थोड़ा, या जरूरत पड़ने पर बहुत सा समय खुद कुछ सीखने के लिए लगाना पड़ेगा।

1. जिस समुदाय में हम हैं, उसके बारे में और उसके ढांचे के बारे में समझ बनाना कि ये कौन लोग हैं और इनके आपसी सम्बन्ध क्या हैं?

2. कौन इस समुदाय को प्रभावित करता है और किससे वे अप्रभावित रहते हैं?

3. उनके यानी समुदाय के हिसाब से सबसे बुनियाद मुद्दे/समस्याएं क्या हैं? हो सकता है उनके सवाल हमारे सवालों से बिलकुल भिन्न हों और यदि ऐसा है तो हम अपनी बात पहुंचा नहीं पाएंगे।

4. वहां बुनियादी सेवाओं – पीने का साफ पानी, स्वास्थ्य, शिक्षा, रोज़गार, मध्यान्ह भोजन और आईसीडीएस कार्यक्रमों की क्या स्थिति है? यह काम सवाल–जवाब से नहीं, बल्कि समुदाय के बीच रहकर करना होगा।

आपको क्या करना है?

अ. आप अपने गांव में बच्चों के पोषण की स्थिति का अध्ययन कीजिये – 1. गांव में छह साल तक के कुल कितने बच्चे हैं? 2. उनमें से कम वज़न के कितने हैं? 3. लड़कियों की क्या स्थिति है? जो बच्चे कम वज़न के या अति कम वज़न के हैं, वे किन समुदायों से सम्बंधित हैं? 4. उनके परिवार में रोज़गार और खाद्य सुरक्षा की क्या स्थिति है? गांव में कुल कितनी गर्भवती और धात्री महिलायें हैं? क्या गांव के लोगों को पता है कि आंगनवाड़ी से कौन–कौन सी सेवाएं मिलती हैं? क्या उन्हें पता है कि आंगनवाड़ी केंद्र वास्तव में स्कूल पूर्व शिक्षा और प्रारंभिक बाल देखरेख का केंद्र माना जाता है?

आ. गांव में आंगनवाड़ी है या नहीं? यदि है तो आंगनवाड़ी का संचालन कैसा है? वहाँ कितने बच्चे दर्ज हैं? कितने बच्चों की उपस्थिति होते हैं? क्या उन्हें पोषण आहार मिलता है? क्या वे उसे पसंद करते हैं? क्या वहाँ हर माह उनका वज़न लिया जाता है? क्या वहाँ कोई अति गंभीर कुपोषित बच्चा दर्ज है? वहाँ कितनी गर्भवती और धात्री महिलायों के नाम दर्ज हैं? क्या उन्हें नियमित रूप से पोषण आहार मिलता है? क्या वे पोषण आहार पसंद करती हैं?

- कामकाज पर जाने वाले परिवार क्या अपने छोटे बच्चों को आंगनवाड़ी केंद्र भेजते हैं? यदि हाँ, तो उनके क्या अनिभव हैं? और यदि नहीं तो क्यों?
- आंगनवाड़ी केंद्र की स्थिति कैसी है?
- क्या समुदाय ने केंद्र से कोई जुडाव स्थापित किया है? यदि नहीं तो क्यों?
- आंगनवाड़ी कार्यकर्ता के क्या विचार और अनुभव हैं?
- समुदाय का छोटे बच्चों (छह साल से कम उम्र के) के विकास के बारे में क्या सोचना है? उनका व्यवहार क्या है?

- ऐसे में छह साल से कम उम्र के बच्चों की सही देखरेख और आंगनवाड़ी के अच्छे संचालन के लिए समुदाय को कैसे लामबंद किया जा सकेगा? एक प्रक्रिया चलाईये और उसका दस्तावेजीकरण कीजिये।
- इसमें आपको यह बताना होगा कि गांव में बच्चों और आंगनवाड़ी केंद्र की स्थिति क्या है?
- समुदाय का नजरिया और व्यवहार क्या है?
- इस स्थिति को बनाने वाले कारक (जाति, लैंगिक भेदभाव, गरीबी, संसाधन की कमी) कौन–कौन से हैं?

सामुदायिक संगठित पहल का दायरा या क्षेत्र

सरकार, ज्यादातर सामाजिक संस्थाएं और समुदाय यही मानते हैं कि यदि आर्थिक विकास हो जाएगा, तो बच्चों की स्थिति अपने–आप बेहतर हो जाएगी। आदिवासी अस्मिता और दलित मुद्दों पर काम कर रहे समूह मानते हैं कि आदिवासियों को प्राकृतिक संसाधनों का हक मिल जाए और जातिवादी व्यवस्था खत्म हो जाए, तो बच्चों का कुपोषण खत्म हो जाएगा। इस तरह की मान्यताओं से इस समय का सबसे मूल और संवेदनशील मुद्दा अनदेखी का शिकार हो जाता है। इस पहल में हमें समुदाय को कुछ ठोस भूमिकाएं लेने के लिए प्रेरित करना है –

1. कुपोषण की एक चुनौती के रूप में सामाजिक स्वीकार्यता स्थापित करना।
2. आईसीडीएस सेवाओं तक सभी बच्चों, महिलाओं और किशोरी बालिकाओं की पहुंच सुनिश्चित करना।
3. पोषण और स्वास्थ्य की समुदाय के द्वारा खुद निगरानी की जाना।
4. स्थानीय निकायों यानी पंचायत और नगरीय निकायों की सहभागिता सुनिश्चित होना।
5. आंगनवाड़ी केन्द्र, दिवस देखभाल केन्द्र, झूलाघर और सामुदायिक केन्द्र की गतिविधियों में समन्वय करना।
6. सामाजिक बहिष्कार खत्म करना – कोई जातिगत भेदभाव नहीं, कोई लैंगिक भेदभाव नहीं, कोई क्षमता आधारित–विकलांगता आधारित भेदभाव नहीं।
7. खाद्य सुरक्षा, भोजन की उपलब्धता और उस तक समुदाय के हर व्यक्ति की पहुंच होना।
8. शासन व्यवस्था और सामंजस्य – कुपोषण की समस्या से कोई एक विभाग नहीं निपट सकता है। इसके लिए स्वास्थ्य, पीने का साफ़ पानी, रोज़गार, खेती, स्थानीय निकायों की अहम भूमिका है।

10. प्राथमिकता और समुदाय – कुपोषण के मूल कारण क्या हैं और समुदाय उनसे कैसे निपटेगा?

हमें यह जानना होगा कि बेहतर समाज के निर्माण के लिए भेदभाव, गैर–बराबरी, हिंसा को खत्म करके और सभी को स्वास्थ्य, शिक्षा, पोषण, अभिव्यक्ति का हक दिलाना जरूरी है। यही सामुदायिक संगठित पहल की सीमाओं का विस्तार है।

सामुदायिक संगठित पहल की कार्ययोजना

- तिरोही गांव में 30 अनुसूचित जाति के परिवार रहते हैं। इनमें से 5 परिवारों के पास कोई जमीन नहीं है। 25 परिवारों के पास 1 से 2 एकड़ जमीन है, किन्तु पानी की कमी और अच्छी जमीन नहीं होने के कारण वे उसका लाभ नहीं ले पाते हैं। ऐसे में वे मुख्यतः अन्य भू–स्वामियों के यहाँ काम करके अपना जीवन–यापन करते रहे हैं। वास्तव में उन्हें साल भर में से 3 या 4 महीनों का ही काम मिल पाता है; और वह भी बहुत कम मजदूरी की दर पर। कुछ कारणों से तिरोही गांव के इन परिवारों को दो साल से महात्मा गांधी ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना के तहत काम भी नहीं मिला है।

- ऐसे में अपन क्या कर सकते हैं? सामुदायिक संगठित पहल की एक ऐसी कार्य योजना बनाईये, जिसका मकसद है इन परिवारों की रोज़गार की मौजूदा स्थिति में बदलाव लाना। मलतब यह कि आप उन्हें महात्मा गांधी ग्रामीण रोज़गार गारंटी क़ानून का लाभ कैसे दिलाएंगे, जिनके लिए यह क़ानून बना है? इस काम में आप क्या प्रक्रिया चलाएंगे, उसका दस्तावेजीकरण कीजिये।

- समुदाय एकजुट कैसे हुआ? (प्रक्रिया, चुनौतियां, सहयोगी ताकतें क्या रही?)

- अपने गांव या क्षेत्र की स्थिति का अध्ययन करके कोई भी एक ऐसा मुद्दा या विषय चुनिए, जो व्यापक हित का हो यानी जिससे समुदाय का हित जुड़ा हुआ हो।

एक ऐसी ही किसी समस्या (छोटी हो या बड़ी, कोई फर्क नहीं पड़ता है) को समाधान के लिए चुनिए और बदलाव के लिए एक रूपरेखा तैयार कीजिये।

अ. इसमें समस्या का विश्लेषण हो।

आ. गांव या क्षेत्र के सामाजिक ताने बाने / ढाँचे के बारे में जानकारी हो।

इ. प्रक्रिया का उल्लेख हो।

ई. अपनी सीखें और अनुभव क्या रहे, इसका उल्लेख हो।

इसमें यह जरूर ध्यान रखियेगा कि आप अपने काम का दस्तावेजीकरण करें यानी उसे लिखे।

अधिक जानकारी के लिए संदर्भ सूत्र

यह समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, समाजकार्य, प्रबन्धन इत्यादि अनेक सामाजिक विज्ञानों की विषय–वस्तु हैं। अतः विस्तार से जानकारी के लिये इन विषयों की संबंधित पुस्तकों से अध्ययन किया जा सकता है। कुछ संदर्भ सूत्र निम्नवत हैं–

- **मानव समाज संगठन एवम् विघटन के मूल तत्व** — डा. डी.के.सिंह, डा. सौरभ पालीवाल, डा. रोहित मिश्र, न्यू रायल बुक कंपनी, लखनऊ
- **समाजशास्त्र की मूलभूत अवधारणायें** — डा. अरूण कुमार सिंह, न्यू रायल बुक कंपनी, लखनऊ
- **व्यक्ति और समाज** — प्रोफेसर पीडी मिश्र, डॉ (श्रीमती) बीना मिश्रा, न्यू रायल बुक कंपनी, लखनऊ
- **भारतीय समाज** — श्यामाचरण दुबे
- **मानव और संस्कृति** — श्यामाचरण दुबे
- **परंपरा इतिहास बोध और संस्कृति** — श्यामाचरण दुबे

■■■